संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

ऋषि प्रसाद

हिन्दी

मूल्य : रु. ६/-
अंक : १८७
जुलाई २००८

शरीर-बल, मनोबल, नेत्रज्योति कैसे बढ़ें ?

परम पूज्य संत श्री आसारामजी बापू

दिव्य प्रेरणा-प्रकाश
युवाधन सुरक्षा
आजीवन ब्रह्मचारी विभूतियाँ

बुद्धिशक्ति व आकर्षणी शक्ति का भंडार कहाँ छुपा है ?

उत्साह, शक्ति, ओज-तेज, प्रतिभा एवं आत्मविश्वास का उद्‌गम-स्थान क्या है ?

२ करोड़
वितरण का संकल्प

अनेक प्रश्नों का एक जवाब दिव्य प्रेरणा-प्रकाश

'युवाधन सुरक्षा अभियान' एक नये मोड़ पर...

अब आपकी सेवा में उपलब्ध है 'युवाधन सुरक्षा' का नूतन संस्करण

'दिव्य प्रेरणा-प्रकाश'

इसके विमोचन-समारोह में पूज्य बापूजी के पावन उद्‌गार :

''युवाधन सुरक्षा पुस्तक के नये संस्करण 'दिव्य प्रेरणा-प्रकाश' में कई प्रेरणाएँ और सूत्र हैं। इस पुस्तक से मैंने बहुत-बहुत बच्चों की जिंदगी सँवरते देखी है। 'यह पुस्तक पढ़ी और मेरी हस्तमैथुन की आदत छूट गयी... मैं आत्महत्या करने से बच गया...' - ऐसे हजारों-हजारों बच्चों के अनुभव हैं।

लोग ५००-५००, १०००-१००० शुल्क लेते हैं, मैं तो मुफ्त में आपको सत्संग, सुखमय जीवन जीने की कुंजियाँ दे रहा हूँ तो कम-से-कम ये ५-५ पुस्तकें लेकर अपने-अपने इलाकों में बाँटने का पुण्यकार्य तो आप जरूर करना। समझ लेना बापू को दक्षिणा दे दी। महिलाएँ इसे पाँच बार पढ़ेंगी तो स्वास्थ्यबल, मनोबल, बुद्धिबल बढ़ेगा। भाइयों में विचारशक्ति, स्वास्थ्यबल व बुद्धिबल बढ़ेगा, पक्की बात है। विद्यार्थी बच्चे-बच्चियाँ पढ़ेंगे तो मार्क अच्छे लायेंगे और माँ-बाप के लिए व समाज के लिए भी हितैषी होंगे। अतः इस पुस्तक से सभी जातियों के, सभी धर्मों के भाई-बहन और विद्यार्थी लाभ उठायें। इसमें आप लोग लग जाओ। अपने-अपने इलाकों में ५ रुपये लेकर पुस्तक दो या कैसे भी...। यह पुस्तक सामनेवाला पाँच बार पढ़े थोड़ी-थोड़ी करके, उसे अवश्य फायदा होगा। आपकी शुभकामना उनको उन्नत करेगी और आपको भी।''

बाल एवं युवा अवस्था में ग्रहणशक्ति व ओजशक्ति मनुष्य को वरदान रूप में प्राप्त होती हैं। इन दोनों का सदुपयोग करने की कला बालकों एवं युवाओं को प्रदान की जाय तो वे पतन के गड्ढे में गिरने से बचकर जीवन के हर क्षेत्र में सफल बनने की शक्ति प्राप्त कर सकते हैं। माता-पिता व गुरुजनों की सेवा करनेवाले, कुल एवं राष्ट्र का नाम रोशन करनेवाले आदर्श नागरिक बन सकते हैं।

बाल एवं युवा वर्ग कुटुंब, कुल-खानदान तथा राष्ट्र की रीढ़ है। आओ, इसे सुदृढ़ बनायें। 'दिव्य प्रेरणा-प्रकाश' पुस्तक विद्यालयों एवं घर-घर में पहुँचाने के अभियान में सहभागी होकर राष्ट्र की सेवा का, गुरुसेवा के दैवी कार्य में सहभागी होने का अपना फर्ज निभायें।

संत श्री आसारामजी आश्रम की सभी शाखाएँ, समितियाँ, साधक परिवार, विद्यालयों के प्राचार्य व शिक्षक तथा सभी राष्ट्रप्रेमी सज्जन 'युवाधन सुरक्षा अभियान' में जुड़कर राष्ट्र के उज्ज्वल भविष्य की सुरक्षा में साझेदार बनें।

'दिव्य प्रेरणा-प्रकाश : युवाधन सुरक्षा' पुस्तक संत श्री आसारामजी आश्रम व सत्साहित्य सेवा-केन्द्रों में उपलब्ध है।

मूल्य रु. ५/- (१०० से अधिक पुस्तक की खरीदी पर छूट मिलेगी)

अधिक जानकारी के लिए संपर्क करें : संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अमदावाद-५.

फोन : (०७९) २७५०५०१०-११. e-mail : ashramindia@ashram.org

युवाधन सुरक्षा : देश की सुरक्षा **युवाधन सुरक्षा : बल की सुरक्षा** युवाधन सुरक्षा : सर्वस्व की सुरक्षा

ऋषि प्रसाद

मासिक पत्रिका

हिन्दी, गुजराती, मराठी, उड़िया, तेलगू व अंग्रेजी भाषाओं में प्रकाशित

वर्ष : १९ अंक : १८७
जुलाई २००८ मूल्य : रु. ६-००
आषाढ़-श्रावण वि.सं.२०६५

सदस्यता शुल्क (डाक खर्च सहित)

भारत, नेपाल और भूटान में

(१) वार्षिक : रु. ६०/-
(२) द्विवार्षिक : रु. १००/-
(३) पंचवार्षिक : रु. २२५/-
(४) आजीवन : रु. ५००/-

पाकिस्तान एवं बांग्लादेश में

(१) वार्षिक : रु. ८०/-
(२) द्विवार्षिक : रु. १५०/-
(३) पंचवार्षिक : रु. ३००/-
(४) आजीवन : रु. ७५०/-

अन्य देशों में

(१) वार्षिक : US $ 20
(२) द्विवार्षिक : US $ 40
(३) पंचवार्षिक : US $ 80

ऋषि प्रसाद (अंग्रेजी)	वार्षिक	द्विवार्षिक	पंचवार्षिक
भारत, नेपाल व भूटान में	७०	१३५	३२५
पाकिस्तान, बांग्लादेश में	९०	१७५	४००
अन्य देशों में	US$20	US$40	US$80

कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नकद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनीऑर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

संपर्क पता : 'ऋषि प्रसाद', श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, अमदावाद-५.
ऋषि प्रसाद से संबंधित कार्य के लिए फोन नं. : (०७९) ३९८७७७१४, ६६११५७१४.
अन्य जानकारी हेतु : (०७९) २७५०५०१०-११, ३९८७७७८८, ६६११५५००.
e-mail : ashramindia@ashram.org
web-site : www.ashram.org

स्वामी : संत श्री आसारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : श्री कौशिकभाई वाणी
प्रकाशन स्थल : श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, मोटेरा, जिला गांधीनगर, पीओ. साबरमती-३८०००५. गुजरात
मुद्रण स्थल : विनय प्रिंटिंग प्रेस, ''सुदर्शन'', मिठाखली अंडरब्रीज के पास, नवरंगपुरा, अहमदाबाद - ३८०००९. गुजरात
सम्पादक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
सहसम्पादक : डॉ. प्रे. खो. मकवाणा, श्रीनिवास

Subject to Ahmedabad Jurisdiction

अनुक्रमणिका

SONY
'संत आसारामजी वाणी' प्रतिदिन सुबह ७-०० बजे।

'परम पूज्य लोकसंत श्री आसारामजी बापू की अमृतवर्षा' रोज दोप. २-०० बजे व रात्रि ९-५० बजे।

'संत श्री आसारामजी बापू की अमृतवाणी' दोप. १२-२० बजे।
आस्था इंटरनेशनल
भारत में दोप.३-३० से यू.के. में सुबह ११.०० बजे से।

रोज दोपहर १२-४० बजे।

नास्ति कश्चिद्गुरोः परः

पुराण भारत की सर्वोत्कृष्ट निधि हैं। पुराणों में वेदादि शास्त्रों के गूढ़तम तत्त्वों एवं रहस्यों को सरल, रोचक एवं मधुर आख्यानशैली में सर्वसाधारण के लिए सुलभ (उपलब्ध) करा दिया गया है। इसलिए पुराणों को अत्यधिक लोकप्रियता प्राप्त हुई है। भगवान वेदव्यासजी द्वारा विरचित सत्शास्त्रों में १८ पुराणों का बहुत ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। इन्हींमें से एक है ब्रह्मवैवर्त पुराण। इसमें ब्रह्मा-विष्णु-महेश त्रिदेवों ने मनुष्यमात्र के कल्याण के उद्देश्य से वेदों एवं समस्त शास्त्रों का रहस्यमय सारतत्त्व प्रकट कर दिया है।

'ब्रह्मवैवर्त पुराण' के ब्रह्म खण्ड के २६वें अध्याय में वर्णन आता है कि भगवान श्री महेश्वर देवर्षि नारदजी से कहते हैं : ''गुरु की आज्ञा ले समयोचित कर्तव्य का पालन करना चाहिए। क्रम यह है कि पहले गुरु का ध्यान करके उन्हें प्रणाम करे। फिर उनकी विधिवत् पूजा करने के पश्चात् उनकी आज्ञा ले इष्टदेव का ध्यान एवं पूजन करे (गुरु के प्रति दृढ़ प्रीतिवाले साधक गुरु को ही इष्टदेव मानते हैं; उनके लिए केवल गुरु का ही पूजन पर्याप्त हो जाता है)। गुरु ही देवता के स्वरूप के दर्शन कराते हैं। वे ही इष्टदेव के मंत्र, पूजाविधि और जप का उपदेश देते हैं। गुरु ब्रह्मा हैं, गुरु विष्णु हैं, गुरु महेश्वर देव हैं, गुरु आद्या प्रकृति - ईश्वरी (दुर्गा देवी) हैं, गुरु चन्द्रमा, अग्नि और सूर्य हैं, गुरु ही वायु और वरुण हैं, गुरु ही माता-पिता और सुहृद हैं तथा गुरु ही परब्रह्म परमात्मा हैं। गुरु से बढ़कर दूसरा कोई पूजनीय नहीं है। इष्टदेव के रुष्ट होने पर गुरु शिष्य अथवा साधक की रक्षा करने में समर्थ हैं परंतु गुरुदेव के रुष्ट होने पर सम्पूर्ण देवता मिलकर भी उस साधक की रक्षा करने में समर्थ नहीं हैं। जिस पर गुरु सदा संतुष्ट हैं, उसे पग-पग पर विजय प्राप्त होती है और जिस पर गुरुदेव रुष्ट हैं, उसके लिए सदा सर्वनाश की ही सम्भावना रहती है।''

'ब्रह्मवैवर्त पुराण' के गणपति खण्ड के ४०वें अध्याय में आता है कि जगद्गुरु ब्रह्माजी परशुरामजी से हितकारक, नीतियुक्त, वेद का सारतत्त्व और परिणाम में सुखदायक वचन बोले :

''राम ! देवता के रुष्ट होने पर गुरु रक्षा कर लेते हैं परंतु गुरु के क्रुद्ध होने पर कोई भी रक्षा नहीं कर सकता। इसलिए गुरु ही ब्रह्मा, गुरु ही विष्णु, गुरु ही महेश्वर देव, गुरु ही परब्रह्म और ब्राह्मणों से भी बढ़कर प्रिय हैं। गुरु ही ज्ञान देते हैं और वह ज्ञान हरिभक्ति उत्पन्न करता है। इस प्रकार जो हरिभक्ति प्रदान करनेवाला है, उससे बढ़कर बंधु दूसरा कौन है ?

हे पुत्र ! श्रीकृष्ण तुम्हारे अभीष्टदेव हैं और स्वयं शंकर गुरु हैं, अतः तुम अभीष्टदेव से भी बढ़कर पूजनीय गुरु की शरण ग्रहण करो। बेटा ! समस्त प्राणियों में श्रीकृष्ण आत्मा हैं, शिव ज्ञान हैं, मैं मन हूँ और विष्णु की सारी शक्तियों से सम्पन्न प्रकृति प्राण है। जो ज्ञानदाता, ज्ञानस्वरूप, ज्ञान के कारण, सनातन मृत्यु को जीतनेवाले तथा काल के भी काल हैं उन गुरु की शरण में जाओ। जो ब्रह्मज्योतिःस्वरूप, भक्तों के लिए मूर्तिमान अनुग्रह, सर्वज्ञ, ऐश्वर्यशाली और सनातन हैं उन गुरुदेव की शरण का आश्रय लो।''

'गणपति खण्ड' के ही ४४वें अध्याय में आता

है कि भगवान विष्णु ने भगवान महेश्वर से कहा :

''शिवजी ! गुरु के क्रोप के अतिरिक्त अन्य अवस्थाओं में मैं हाथ में चक्र लेकर भक्तों की रक्षा करता रहता हूँ। गुरु के रुष्ट होने पर मैं रक्षा नहीं करता क्योंकि गुरु की अवहेलना बलवती होती है। जो गुरु की सेवा से हीन है, उससे बढ़कर पापी दूसरा नहीं है ।

अहो ! जिसकी कृपा से मानव सब कुछ देखता है, वह पिता सबके लिए सबसे बढ़कर माननीय और पूजनीय होता है। वह जन्म देने के कारण जनक, रक्षा करने के कारण पिता और विस्तीर्ण करने के कारण कलारूप से प्रजापति है। उस पिता से माता गर्भ में धारण करने एवं पालन-पोषण करने से सौगुनी बढ़कर वन्दनीया, पूज्या और मान्या है। वह प्रसव करनेवाली वसुन्धरा के समान है । अन्नदाता, माता से भी सौगुना वन्दनीय, पूज्य और मान्य है क्योंकि अन्न के बिना शरीर नष्ट हो जाता है और विष्णु ही कलारूप से अन्नदाता होते हैं। अभीष्टदेव अन्नदाता से भी सौगुना श्रेष्ठ कहा जाता है किंतु विद्या और मंत्र प्रदान करनेवाला गुरु अभीष्टदेव से भी सौगुना बढ़कर है। जो अज्ञानरूपी अन्धकार से आच्छादित हुए समस्त पदार्थों को ज्ञानदीपक-रूपी नेत्र से दिखलाता है, उससे बढ़कर बान्धव कौन है ? गुरु द्वारा दिये गये मंत्र और तप से अभीष्ट सुख, सर्वज्ञता और समस्त सिद्धियों की प्राप्ति होती है, अतः गुरु से बढ़कर बान्धव दूसरा कौन है ? गुरु द्वारा दी गयी विद्या के बल से मनुष्य सर्वत्र समय पर विजयी होता है, इसलिए जगत में गुरु से बढ़कर पूज्य और उनसे अधिक प्रिय बंधु कौन हो सकता है ?

जो मूर्ख विद्यामद अथवा धनमद से अंधा होकर गुरु की सेवा नहीं करता, वह ब्रह्महत्या आदि पापों से लिपायमान होता है, इसमें संशय नहीं है । जो दरिद्र, पतित एवं तुच्छमति व्यक्ति गुरु के साथ साधारण मानव की भाँति आचरण करता है, वह तीर्थस्नायी होने पर भी अपवित्र है और उसका कर्मों के करने में अधिकार नहीं है। गुरु ही ब्रह्मा, गुरु ही विष्णु, गुरु ही महेश्वर देव, गुरु ही परब्रह्म, गुरु ही सूर्यरूप, गुरु ही चन्द्र, इन्द्र, वायु, वरुण और अग्निरूप हैं। यहाँ तक कि गुरु स्वयं सर्वरूप ऐश्वर्यशाली परमात्मा हैं। वेद से उत्तम दूसरा शास्त्र नहीं है , श्रीकृष्ण से बढ़कर दूसरा देवता नहीं है, गंगा के समान दूसरा तीर्थ नहीं है और तुलसी से उत्तम दूसरा पुष्प नहीं है, पृथ्वी से बढ़कर दूसरा क्षमावान नहीं है, पुत्र से अधिक दूसरा कोई प्रिय नहीं है, दैव से बढ़कर शक्ति नहीं है और एकादशी से उत्तम व्रत नहीं है । शालग्राम से बढ़कर यंत्र, भारत से उत्तम क्षेत्र और पुण्यस्थलों में वृन्दावन के समान पुण्यस्थान नहीं है। मोक्षदायिनी पुरियों में काशी और वैष्णवों में शिव के समान दूसरा नहीं है ।

न पार्वत्याः परा साध्वी न गणेशात्परो वशी ।
न च विद्यासमो बन्धुर्नास्ति कश्चिद्गुरोः परः ॥

न तो पार्वती से अधिक कोई पतिव्रता है और न गणेश से उत्तम कोई जितेन्द्रिय है। न तो विद्या के समान कोई बंधु है और न गुरु से बढ़कर कोई अन्य है ।'' ☐

सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) 'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्र-व्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक अथवा सदस्यता क्रमांक अवश्य लिखें । पता-परिवर्तन हेतु एक माह पूर्व सूचित करें ।

(२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरुआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जायेगी ।

प्रश्न : धर्म, अर्थ, काम व मोक्ष इन चार पुरुषार्थों में अर्थ पुरुषार्थ को कितना महत्त्व देना चाहिए ?

उत्तर : धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष - चार पुरुषार्थ हैं। पैसा कमाना भी पुरुषार्थ है, कामनापूर्ति करना भी पुरुषार्थ है, धर्म का अनुसरण करना भी पुरुषार्थ है और जन्म-मरण आदि सारे झंझटों को पार कर लेना - मोक्ष, मुक्ति पा लेना भी पुरुषार्थ है।

अर्थ पुरुषार्थ को इतना ही महत्त्व दें कि अर्थ के द्वारा अनर्थ न हो, अशांति न हो, विलासिता न हो, अपितु कामनापूर्ति (आवश्यकतापूर्ति) होकर मोक्ष का द्वार खुल जाय। धन का ठीक ढंग से यत्न करके उपार्जन करना यह पुरुषार्थ है लेकिन गलत तरीकों से या लोगों का शोषण करके धन का बड़ा ढेर करना यह अर्थ से अनर्थ करा देता है। ऐसा अर्थ किसीको चिंता में ले डूबता है- जैसे रॉक्स फेलर। उसने इतना कमाया कि वही उसके लिए अनर्थ हो गया। फिर पता चला कि यह मेरे लिए अनर्थ हो रहा है तो फिर उस अर्थ से दान-पुण्य करके धर्म-लाभ किया तब कहीं तबीयत ठीक हुई।

अर्थ कितना कमाना चाहिए ?

साँईं इतना दीजिये, जामें कुटुम समाय।
मैं भी भूखा ना रहूँ, साधु न भूखा जाय॥

हम और घर-परिवार भी ठीक से रह पायें, खा पायें, जी पायें और साधु-संत आदि अतिथि भी हमारे द्वार से भूखे न जायें।

वासना का तो कोई अंत नहीं। दो कमरे में गुजारा हो सकता हो तो बोले दस कमरेवाला मकान ठीक है। ऐसा नहीं, यह अनर्थ कर दिया। आवश्यकतापूर्ति करे उतना अर्थ हो, इच्छापूर्ति कर-करके अर्थ में अनर्थ के काँटें न बोयें।

'हाय पैसा ! हाय पैसा !! पैसा !!!' - विदेशों में अर्थ के पीछे लोग इतने अनर्थ में लग गये कि उन्हें रात को नींद भी ठीक से नहीं आती। वहाँ ३० प्रतिशत गहरे अनिद्रा के रोगी हैं और ६० प्रतिशत सामान्य रोगी हैं। इन आँकड़ों से ९० प्रतिशत बनता है और कहीं-कहीं ९८ प्रतिशत का भी सुनायी पड़ता है। ९० प्रतिशत या ९८ प्रतिशत हो लेकिन है शर्म की बात। भारत में यह आँकड़ा २ प्रतिशत है यह भी शर्म की बात है। हम तो चाहते हैं मनुष्यमात्र स्वस्थ जीवन, सुखी जीवन, समाहित जीवन का अधिकारी हो और अपने आत्मा-परमात्मा को पाकर जीवन्मुक्त होने के योग्य हो। निगुरे लोग बेचारे खामखा झुलस-झुलसकर दुर्लभ मनुष्य-जीवन नष्ट कर रहे हैं। भगवान सबको सद्बुद्धि दें, सजगता दें, 'हाय-हाय'वाली जिंदगी नहीं, 'हरि-हरि'वाली जिंदगी।

हरि ब्यापक सर्बत्र समाना।
प्रेम तें प्रगट होहिं मैं जाना॥
(रामचरित. बा.कां. : १८४.३)

अतः प्रभुप्रीति, प्रभुज्ञान, प्रभुविश्रांति में सब धन्य हों। कामना में इतने तबाह हो गये कि धर्म और मोक्ष तो अछूता ही रह गया।

अर्थ को इतना ही महत्त्व दें कि अपनी आवश्यकता पूरी हो, वासनाएँ बढ़ें नहीं, व्यर्थ का खर्च बढ़े नहीं, व्यर्थ का दिखावा बढ़े नहीं और व्यर्थ की चिंता न बढ़े। कामनापूर्ति हो लेकिन अशास्त्रीय ढंग से, अमर्याद होकर अथवा किसीका शोषण करके नहीं, पत्नी के स्वास्थ्य का, पति के

स्वास्थ्य का, परिवार के स्वास्थ्य का ख्याल रखकर आवश्यक वस्तुओं के द्वारा उपभोग करना यह कामनापूर्ति है।

आय का दसवाँ हिस्सा सत्कर्मों में लगायें ताकि अर्थ अनर्थकारी न हो, लोभ न बढ़ जाय और अर्थ के चिंतन-चिंतन में बुद्धि अनर्थकारिणी न हो। अर्थ के पहले आता है धर्म। अर्थ-धर्म-काम-मोक्ष नहीं धर्म-अर्थ-काम-मोक्ष। धर्म की मर्यादा में रहकर, शास्त्र की मर्यादा में रहकर अर्थ का उपार्जन करें तो वह अर्थ सुखदायी होगा। वे लक्ष्मीजी होंगी, लक्ष्मीजी नारायण को ले आती हैं। अर्थ की जगह पर वित्त आयेगा तो **वित्त एटले जे विताड़े...** गुजराती में 'विताड़े' मतलब जो परेशान करे उसे 'वित्त' बोलते हैं। जो परेशान कर दे उसको 'पैसा' बोलते हैं और जो परेशानियाँ हर ले उसको 'लक्ष्मी' बोलते हैं। हमारे यहाँ दिवाली के दिनों में लक्ष्मी-नारायण का पूजन होता है। तो जो नारायण से मिलानेवाली है, मोक्ष का अनुभव करानेवाली है वह संपदा जरूर कमानी चाहिए, जरूर रखनी चाहिए, न कि वह संपदा जो हमारे लिए विपदा बन जाय। आयकर (इनकम टैक्स) की चिंता रहे अथवा दूसरे धनी को देखकर हम पचते रहे या निर्धन को देखकर हम अकड़ते रहे तो यह अनर्थ हो गया। धन को इतना महत्त्व न दें कि गरीबों को या कम पैसेवालों को देखकर अहंकार आ जाय और बड़ों को देखकर सिकुड़न आ जाय। यह अर्थ को महत्त्व नहीं अति महत्त्व दिया। वह अर्थ अनर्थकारी हो जायेगा।

जिसके पास ज्यादा है वह भी छोड़ के मरेगा बल्कि उसे ज्यादा सँभालने की चिंता रहेगी और जिसके पास कम है वह उसीसे गुजारा करके भी मौत की तरफ जा रहा है। अर्थ को इतना महत्त्व न दें कि मौत सदा ही हमारे सिर पर चढ़ी रहे। मौत के सिर पर पैर रख के मोक्ष के द्वार तक पहुँचें - इतना ही अर्थ का उपयोग है। जैसे गाड़ी, मोटर, मकान, साधन उपयोग के लिए हैं, सिर पर उठाने के लिए नहीं हैं। ऐसे ही धन सिर पर चढ़ाने के लिए नहीं है, अहंकार बढ़ाने के लिए नहीं है, वासना बढ़ाने के लिए नहीं है, दिखावा बढ़ाने के लिए नहीं है, आवश्यकतापूर्ति के लिए है। आप जो कमाते हैं उस धन से आप व्यक्तिगत सुविधाएँ ज्यादा भोगते हैं कि परिवार के लिए भी उसका ठीक सदुपयोग करते हैं ? केवल अपने परिवार के लिए उसका उपयोग करते हैं कि पूरे समाज के लिए ? आपका अर्थ जितना व्यापक काम में आयेगा उतना ही वह सार्थक हो जायेगा और जितना अर्थ व्यक्तिगत भोग में लगेगा और व्यक्तिगत अहंकार को सजाने में लगेगा उतना ही वह अनर्थकारक हो जायेगा।

धर्म का अनुसरण करके अर्थ कमायेंगे और उस अर्थ से कामनापूर्ति करेंगे तो **धर्म तें बिरति...** आपको वैराग्य आयेगा। आपका विवेक जगेगा, अंदर से आपको प्रकाश होगा। फिर आप भगवान में विश्रांति पायेंगे, भगवद्ध्यान में जायेंगे, भगवद्-रस पायेंगे - जिस रस के आगे विश्व के सारे विषय-विकार तुच्छ हो जाते हैं। ऐसा सौभाग्य भी जगेगा। अगर धर्म का आश्रय न लेकर अर्थ कमाते हैं तो 'खपे... खपे... खपे...' (चाहिए... चाहिए... चाहिए...) में कमानेवाले ही खप जाते हैं।

मुझे जल्दी है, जल्दी है, जल्दी है... भागा-भागी, भागा-भागी... पेट के लिए तो कमाते हैं लेकिन ऐसी बेवकूफी कि समय से भोजन नहीं कर सकते। धन को इतना महत्त्व देते हैं कि न समय से नहा सकते हैं, न समय से सो सकते हैं, न समय से परिवार से मिल सकते हैं, न समय से भगवान में विश्रांति पा सकते हैं। ऐसे कई धनवानों को मैं जानता हूँ जिनके पास हजार करोड़ नहीं उससे भी ज्यादा हैं और रात को नींद नहीं आती, बढ़िया-बढ़िया बीमारियाँ भी हैं। तो यह अर्थ अनर्थकारी हो गया। **(शेष पृष्ठ २६ पर)**

अपनों से न्याय, औरों से उदारता

- पूज्य बापूजी

घर के संघर्ष को मिटाओ। घर के संघर्ष रोग, कलह आदि को जन्म देते हैं। इनसे बचने के लिए प्रार्थना करना :

हे प्रभु ! आनंददाता ! ज्ञान हमको दीजिये।
शीघ्र सारे दुर्गुणों को दूर हमसे कीजिये ॥

घर में झूठ-कपट से प्रेम की कमी होती है और विकार पैदा होता है । निंदा से संघर्ष और ईर्ष्या से अशांति पैदा होती है । हमारा जो समय भगवद्ध्यान में जाना चाहिए वह निंदा, ईर्ष्या, झूठ-कपट में बरबाद हो जाता है । हमारी बड़े-में-बड़ी गलती होती है कि हम दूसरों के दोष देखते हैं। दूसरों पर नजर डालना ही बुरा है। अगर डालें तो उनके गुण पर ही डालें। अपनेको ही सँवार लें, अपने तन-मन को बढ़िया बना लें यह बहुत बड़ी सेवा है । आपका हृदय जल्दी निर्दोष हो जायेगा।

सुनहु तात माया कृत गुन अरु दोष अनेक।
गुन यह उभय न देखिअहिं देखिअ सो अबिबेक ॥

(रामचरित. उ.कां. : ४१)

दूसरों के दोष मत देखो। दूसरों की गहराई में परमेश्वर को देखो, अपनी गहराई में परमेश्वर को देखो, उसे अपना मानो और प्रीतिपूर्वक स्मरण करो, फिर चुप हो जाओ तो भगवान में विश्रांतियोग हो जायेगा। यह बहुत सरल है और बहुत-बहुत खजाना देता है।

जो प्रेम परमात्मा के नाते करना चाहिए वह प्रेम अगर मोह के नाते करते हो तो बदले में दुःख मिलता है, यह प्रकृति का नियम है। मैंने कई लोगों को देखा है जिन्होंने औरों से कपट करके भी अपने बेटे को पोसा है, उन्हींके बेटों ने उन्हें खून के आँसू रुलाया है । जिन्होंने इधर-उधर करके अपनी पत्नी को खूब ऐश कराया है मैंने उनकी पत्नी के द्वारा ही उनको सहते देखा है। जिन्होंने अपने पति को भ्रष्टाचार में सहयोग दिया है उन्हींके पति उनके खिलाफ हो गये । जिन्होंने अपने मित्रों को अन्य से कपट करके पोसा, मित्र उन्हींके शत्रु हो गये।

जो माताएँ मोह में आकर अपने बेटों से प्यार और दूसरों के बच्चों से पक्षपात करती हैं उनके बेटे नालायक हो जाते हैं। अपनेवाले से न्याय और दूसरों से उदारता कीजिये।

दो भाई थे। बड़ा भाई अंग्रेजी शिक्षा से प्रभावित था। चालाकी से सुखी होने की गड़बड़ में था। उसे धर्म का ज्ञान नहीं था। वह आम ले आया । दोनों भाइयों के बेटे बाहर खेल रहे थे। उसने दोनों बच्चों को बुलाया : ''कम हियर (यहाँ आओ।)... देखो मैंगोऽऽऽ...।''

दोनों हाथों में एक-एक आम निकाला। जिस हाथ में बड़ा आम था वहाँ भाई का बेटा आ गया और जिसमें छोटा आम था वहाँ अपना बेटा आ गया। उसने बच्चों से कहा : ''आँखें बंद करो। मैं तुम्हें मैजिक (जादू) दिखाता हूँ ।... वन... टू... थ्री ।''

बच्चों ने जैसे ही आँखें बंद कीं, तुरंत जहाँ अपना बेटा था वहाँ बड़ा आम और जहाँ भाई का लड़का था वहाँ छोटा आम रख दिया।

छोटा भाई छत से सब देख रहा था। वह नीचे आया और बोला : ''भाई ! हम अलग हो जायें तो अच्छा है।''

''क्यों, क्या हुआ ?''

''मेरे जीते-जी तुम ऐसा जादू दिखा रहे हो, अपने बेटे को बड़ा आम देने के लिए मेरे बेटे से अन्याय कर रहे हो, मेरे मरने के बाद तो इसे फुटपाथ पर भेज दोगे। अब हम अलग हो जायें तो अच्छा है।''

व्यवहार में सुखी रहना हो तो अपने बच्चे को थप्पड़ मारी जा सकती है लेकिन पड़ोस के बच्चे को थप्पड़ मारने का अपना अधिकार नहीं है। पड़ोस के बच्चे को मिठाई दे सकते हैं। आँख दिखानी हो तो अपना बच्चा। पड़ोस के बच्चे के साथ उदारता का व्यवहार करना चाहिए। देवरानी-जेठानी के बच्चों को ज्यादा प्यार करो ताकि उनके हृदय में आपके लिए और आपके बच्चे के लिए प्यार पैदा हो।

हम क्या करते हैं ? अपने बेटे का पक्ष लेते हैं, देवरानी-जेठानी के बच्चे को आँख दिखाते हैं। फिर देवरानी-जेठानी के मन में भी वही भाव उभरता है और संघर्ष होता है। दो भाई अथवा दो माइयों की बेवकूफी के कारण प्रेम झगड़े में बदल जाता है और जीवन संघर्ष की उस आग में तपने लगता है।

अधिक धन से आपके बेटे-बेटियाँ संपन्न नहीं होंगे। उनको ज्ञान, भक्ति और भगवान की प्रीति से ही संपन्न करो, सुसंस्कार और सज्जनता से संपन्न करो। ❑

सेवाधारियों व सदस्यों के लिए विशेष सूचना

'ऋषि प्रसाद' पत्रिका के सभी सेवादारों तथा सदस्यों को सूचित किया जाता है कि 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका की सदस्यता के नवीनीकरण के समय पुराना सदस्यता क्रमांक/रसीद-क्रमांक एवं सदस्यता 'पुरानी' है - ऐसा लिखना अनिवार्य है। जिसकी रसीद में ये नहीं लिखे होंगे, उस सदस्य को नया सदस्य माना जायेगा।

महापुरुषों को पहचानो

- पूज्य बापूजी

राग-द्वेष और अहं जिनका चला गया है ऐसे ज्ञानी पुरुष के लिए सुख, सुख नहीं होता और दुःख, दुःख नहीं होता। उनके लिए तो सब ब्रह्म-ही-ब्रह्म है, आनंद-ही-आनंद है। उनकी जो सेवा करता है, उनकी आज्ञा में रहता है उसका तो बेड़ा पार हो जाता है किंतु उनके लिए कोई जरा-सा भी बुरा सोचे तो भले वे संत-पुरुष कुछ भी न कहें किंतु प्रकृति देर-सबेर उसको ठीक करके ही रहती है क्योंकि प्रकृति सदैव महापुरुषों की सेवा में प्रस्तुत होती है। जिनकी सेवा में सारी सृष्टि तत्पर रहती है ऐसे ज्ञानी महापुरुषों की सेवा करनेवाला निश्चित ही अपने भाग्य को सँवार लेता है।

इतिहास उठाकर देखें तो पता चलेगा कि सच्चे संतों व महापुरुषों के निंदकों को कैसे-कैसे भीषण कष्टों को सहते हुए बेमौत मरना पड़ा है और पता नहीं किन-किन नरकों में सड़ना पड़ा है। अतएव समझदारी इसीमें है कि हम संतों की प्रशंसा करके या उनके आदर्शों को अपनाकर लाभ न ले सकें तो उनकी निंदा करके अपने पुण्य व शांति को नष्ट नहीं करना चाहिए।

महापुरुषों की कोई निंदा करे चाहे स्तुति, इससे उनके आत्मराज्य में कोई फर्क नहीं पड़ता किंतु निंदा करनेवाला स्वयं का तो नुकसान करता

ही है, समाज को भी लाभ लेने से वंचित करने का पाप लेकर अपनी जिंदगी तबाह करता है।

जिसे अशांत होना हो, दुःखी होना हो वह ब्रह्मज्ञानी की जरा निंदा करके देखे। पुण्यनाश करना हो तो ब्रह्मवेत्ता की निंदा करना शुरू कर दो, देखो कैसा पुण्यनाश होता है। अशांति शुरू हो जायेगी। अगर पापनाश करना हो तो ब्रह्मवेत्ता का सत्संग सुनकर ईमानदारी से सद्बुद्धि प्राप्त करो। ऐसा पापनाश होकर पुण्योदय हो जाता है कि भगवान का साक्षात्कार करके वे महाभाग जीवन्मुक्त हो जाते हैं।

गुरु के आश्रम में सब लोग एक तरफ हो जाते, मेरे खिलाफ क्या-क्या साजिश रचते ! लोगों को लगता कि मैं अकेला पड़ गया। अरे मूर्ख ! जिसके हृदय में गुरुभक्ति है वह अकेला दिखता है लेकिन सारा ब्रह्माण्ड उसके साथ होता है बबलू ! बुद्धि मारी गयी है क्या ? जीसस अकेले पड़ गये ? जीसस अकेले हैं ? सुकरात अकेले हैं ? बुद्ध अकेले हैं ? बुद्ध की ऐसी निंदा हुई, ऐसी निंदा हुई कि कोई कह दे यह बुद्ध का भिक्षुक है तो लोग पत्थर मारें। ऐसी बुद्ध की निंदा और कुप्रचार हुआ तो क्या हो गया, बुद्ध अकेले हैं ? अरे ! लाखों-लाखों बुद्धिस्ट हैं अभी, लाखों-लाखों बुद्ध के चेले हैं अभी। ऐसे ही कबीरजी के लिए भी चला... महावीर के लिए चला... चला... चला... निंदा, अफवाह फिर भी देखो ऐसे पुरुषों के साथ ...।

हयाती काल में चाहे कितना कोई समाज अन्याय करे, अनर्थ करे वही पाप के भागी होते हैं। उन महापुरुषों का क्या बिगड़ा है ? ऐसे शिरडीवाले साँई बाबा ऐसे अकेले पड़ गये कि लोग उनको बेचारे को दिया जलाने के लिए बत्ती व तेल की एक बूँद नहीं देते थे। अभी तो १०-१० करोड़ की उनकी मूर्ति बनाते हैं, सिंहासन बनाते हैं।

ब्राह्मी स्थिति प्राप्त किये हुए महापुरुषों को हयाती में कोई जानो तो बेड़ा पार, नहीं जानो तो अपनेको ही घाटा है।

साँई बाबा को जिन्होंने उस समय जाना होगा, उतना जो लाभ लिया होगा, वह अभी थोड़े ही होगा ? बुद्ध को हयाती में जानकर श्रद्धालुओं ने जितना लाभ लिया होगा, अभी उतना थोड़े ही मिलेगा ? मेरे गुरुजी की हयाती से मैंने जो लाभ लिया, अभी थोड़े ही उनकी मूर्ति से उतना लाभ ले सकता था ? हयाती काल में तो समाज अफवाह का शिकार बन जाता है और फिर वे चले जाते हैं तो उनकी मूर्ति के आगे नाक रगड़-रगड़कर मरे जा रहे हैं। यह उलटी चाल है।

आत्मारामी महापुरुषों के रहते जिसने जो फायदा उठा लिया सो उठा लिया, बाकी तो किताबें पढ़ते रहना, कैसेटें देखते रहना, प्रार्थनाएँ करते रहना लेकिन उतना लाभ किसी कीमत पर नहीं हो सकता जितना प्रत्यक्ष सान्निध्य से हो सकता है।

सत्संग की पुस्तकें पढ़कर सत्संग करना यह अच्छा है लेकिन हयात महापुरुष के सान्निध्य में सत्संग मिल जाय तो कहना ही क्या !

हयात महापुरुष आग के समान हैं, तू उसमें अपने अहंकार व वासना की आहुति देकर देख ले। वे संसार के सर्वोत्तम केवट हैं, तू उनकी भवतरण-नौका में सवार होकर देख ले। तू निश्चित ही समस्त दुःखों-आपदाओं से पार हो जायेगा, भवसागर से तर जायेगा। ❐

कुछ भी नहीं मैं कर सकूँ, करता सभी विश्वेश है।
ऐसी समझ उत्तम महा, सच्चा यही आदेश है ॥
पूरा करूँगा कार्य यह, वह कार्य मैंने है करा।
पूरा यही अज्ञान है, अभिमान यह ही है खरा ॥
'मैं' क्षुद्र है, 'मेरा' बुरा, 'मुझ' भी मृषा है त्याग रे।
अपना पराया कुछ नहीं, अभिमान से हट भाग रे ॥
यह मार्ग है कल्याण का, हो जाय तू निष्पाप रे ॥
देहादि 'मैं' मत मान रे, 'सोऽहं' किया कर जाप रे ॥

(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'आत्मगुंजन' से)
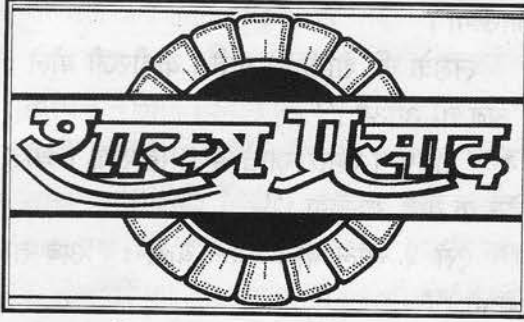
ज्ञानी की गत ज्ञानी जाने

श्री रमण महर्षि ने भक्तों से कहा : ज्ञानी के बाह्य दिखावे से किसीको भ्रमित नहीं होना चाहिए। 'वेदांत चूड़ामणि' के पंचम अध्याय के १८१ वें श्लोक का भावार्थ इस प्रकार है : यद्यपि जीवन्मुक्त पुरुष प्रारब्धानुसार ज्ञान या अज्ञान से आवृत होता प्रतीत होता है, तथापि वह सर्वदा उस आकाश के समान निर्मल है जो वायुवश कभी घनावृत होता है तथा कभी बादलों से मुक्त और स्वच्छ। उक्त व्यक्ति आत्मा में ही रमण करता रहता है, जिस प्रकार सती स्त्री पति का ही सुख उपभोग करती है, चाहे वह प्रारब्धानुसार अन्य व्यक्तियों से उपलब्ध सामग्री से भी उसकी सेवा करे। ज्ञानी ज्ञानशून्य व्यक्ति की भाँति मौन ही रहता है किंतु उसका यह तटस्थ भाव वेदों में निहित वैखरी वाणी की द्वैतयुक्तता के कारण ही होता है। उसके मौन की यह उच्चतम अभिव्यक्ति अद्वैत के साक्षात्कार का परिणाम है, जो वेदों का वास्तविक सारतत्त्व है।

ज्ञानी आकाशवाणी के समान सहज भाव से शब्दोच्चार करता रहता है। यदि उसके शब्द उन्मत्त की भाँति अनर्गल भी प्रतीत होते हैं तो उसका कारण यह है कि उसकी अनुभूति आलिंगनबद्ध प्रेमियों की भाँति अवर्णनीय होती है। यदि उसकी वाणी प्रशस्त एवं प्रवाहपूर्ण है तो उसका कारण उसकी उस अनुभूति का सतत स्मरण है, जो उसके अद्वैत भाव में स्थिर रहने से अनुप्रेरित होती है। वियोग के अवसर पर ज्ञानी सामान्यजन के समान दुःखविद्ध भी प्रतीत होता है, तथापि यह भी इन्द्रियों के प्रति उसके उपयुक्त स्नेह एवं करुणा का प्रतीक है। इन्द्रियों को शमित कर ज्ञानी यह अनुभव कर चुका है कि ये इन्द्रियाँ परमात्मा के साधन तथा व्यक्त रूप मात्र हैं। ज्ञानी का जगत के चमत्कारों के प्रति चकित भाव मायाजनित अज्ञान का उपहास ही है। ज्ञानी यदि कामोपभोग में निमग्न प्रतीत हो तो भी यही जानना चाहिए कि इस प्रकार वह आत्मा के उस सहज शाश्वत आनंद में ही तल्लीन है। उसने अपनी मूल प्रकृति एवं स्वरूप के प्राप्त्यर्थ स्वयं को जीव और ब्रह्म के रूप में विभाजित कर लिया है तथा अब उनके पुनर्मिलन का आनंद प्राप्त कर रहा है। **रौद्ररूप होकर भी ज्ञानी अपराधी का हितैषी है। ज्ञानी की समग्र क्रियाएँ मानवीय स्तर पर दिव्यत्व का व्यक्त रूप हैं। ज्ञानी की सदेह मुक्ति में किंचित् भी संदेह वांछित नहीं। ज्ञानी का अस्तित्व जगत के कल्याण हेतु ही है।**

परीक्षित निर्जीव नवप्रसूत शिशु था। महिलाओं ने आर्त स्वर में बालक की रक्षार्थ श्रीकृष्ण को पुकारा। उपस्थित ऋषियों को चिंता थी कि श्रीकृष्ण अश्वत्थामा के अपांडवास्त्र बाण से बालक की रक्षा करने में किस प्रकार समर्थ होंगे। श्रीकृष्ण ने कहा : ''यदि कोई नित्य ब्रह्मचारी बालक को स्पर्श कर दे तो उसका पुनरुज्जीवन संभव है।''

स्वयं शुकदेवजी ने भी बालक को स्पर्श करने का साहस नहीं किया। विख्यात ऋषियों में से किसीको भी बालक को स्पर्श न करते देख श्रीकृष्ण ने आगे बढ़कर बालक का स्पर्श किया तथा कहा : ''यदि मैं नित्य ब्रह्मचारी होऊँ तो बालक पुनः जीवित हो जाय।''

बालक ने श्वास लेना आरम्भ कर दिया तथा आगे चलकर परीक्षित नाम से विख्यात हुआ। जरा सोचिये तो कि १६००० गोपियों से समावृत कृष्ण किस प्रकार ब्रह्मचारी हैं ? ऐसा है जीवन्मुक्ति का रहस्य ! जीवन्मुक्त वह है जो आत्मा से पृथक् अन्य किसी वस्तु का अनुभव ही न करे।

('रमण महर्षि से बातचीत' पुस्तक से पृष्ठ क्र. ४६८) ❐

नाव पानी में रहे, पानी नाव में नहीं...

- पूज्य बापूजी

सुबह नींद में से उठ के श्वास गिनो और शांत हो जाओ। अपने परमात्मा में, आत्मा में ही खुश रहना। 'मेरा पैसा कहाँ है ? मेरा छोरा कहाँ है ?' नश्वर दुनिया की चीजों की क्या इच्छा करना ? 'मैं अमर आत्मा हूँ। शरीर मरेगा, मैं तो अपने-आपमें मस्त हूँ। मुझे मारे ऐसी कोई तलवार नहीं, कोई मौत नहीं। अमर आत्मा के आगे तो मौत की मौत हो जाय। मैं तो अमर आत्मा हूँ। ॐ... हरि ॐ... ॐ...' - इस प्रकार अमर आत्मा का विचार करे तो अमर आत्मा को पायेगा और बेटे-बेटी का विचार करे, नाती-पोते का विचार करे तो अंत में उन्हींकी याद आयेगी और वहीं जन्मेगा।

भगवान ने 'गीता' में कहा है :

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः ॥

'हे कुन्तीपुत्र अर्जुन ! यह मनुष्य अंतकाल में जिस-जिस भी भाव का स्मरण करता हुआ शरीर का त्याग करता है, उस-उसको ही प्राप्त होता है क्योंकि वह सदा उसी भाव से भावित रहा है।' (८.६)

एक बार संत कबीरजी ने एक किसान से कहा : ''तुम सत्संग में आया करो।''

किसान बोला : ''हाँ महाराज ! मेरे लड़के की सगाई हो गयी है, शादी हो जाय फिर आऊँगा।''

लड़के की शादी हो गयी। कबीरजी बोले : ''अब तो आओ।''

''मेहमान आते-जाते हैं। महाराज ! थोड़े दिन के बाद आऊँगा।''

ऐसे २ साल बीत गये। बोले : ''अब तो आओ।''

बोला : ''महाराज ! मेरी बहू है न, वह माँ बननेवाली है। मेरा छोरा बाप बननेवाला है। मैं दादा बननेवाला हूँ। घर में पोता आ जाय, फिर कथा में आऊँगा।''

पोता हुआ। ''अब तो सत्संग में आओ।''

''अरे महाराज ! आप मेरे पीछे क्यों पड़े हैं ? दूसरे नहीं मिलते हैं क्या ?''

कबीरजी ने हाथ जोड़ लिये। कुछ वर्ष के बाद कबीरजी फिर गये, देखा कि कहाँ गया वह खेतवाला ? दुकानें भी थीं, खेत भी था। लोग बोले : ''वह तो मर गया !''

''मर गया ?'' ''हाँ।''

मरते-मरते वह सोच रहा था कि 'मेरे खेत का क्या होगा, दुकान का क्या होगा ?' कबीरजी ने ध्यान लगा के देखा कि दुकान में चूहा बना है कि खेत में बैल बना है ? देखा कि अरहट में बँधा है, बैल बन गया है। उसके पहले हल में जुता था, फिर गाड़ी में जुता। अब बूढ़ा हो गया है। कबीरजी थोड़े-थोड़े दिन में आते-जाते रहे। फिर उस बूढ़े बैल को, अब काम नहीं करता इसलिए तेली के पास बेच दिया गया। तेली ने भी काम लिया फिर बेच दिया कसाई को और कसाई ने 'बिस्मिल्लाह !' करके छुरा फिरा दिया। चमड़ा उतार के नगाड़ेवाले को बेच दिया और टुकड़े-टुकड़े करके मांस बेच दिया।

कबीरजी ने साखी बनायी :

कथा में तो आया नहीं, मरकर

बैल बने हल में जुते, ले गाड़ी में दीन।

हल नहीं खींच सका तो गाड़ी, छकड़े को खींचने में लगा दिया।

तेली के कोल्हू रहे, पुनि घर कसाई लीन।
मांस कटा बोटी बिकी, चमड़न मढ़ी नगार।
कुछ एक कर्म बाकी रहे, तिस पर पड़ती मार॥

नगारे पर डंडे पड़ रहे हैं। अभी कर्म बाकी हैं तो उसे डंडे पड़ रहे हैं। 'मेरा बेटा कहाँ है ? मेरी बेटी कहाँ है ?...' डंडे पड़ेंगे फिर। 'मेरा परमात्मा कहाँ है ? अमर आत्मा कहाँ है ? यह तो मरनेवाला शरीर मर रहा है, सपने जैसा है। कई बेटे-बेटी सपने हो गये, संसार सपना हो रहा है लेकिन जो बचपन में मेरे साथ था, शादी में साथ था, बुढ़ापे में साथ है, मरने के बाद भी जो साथ नहीं छोड़ेगा वह मेरा प्रभु आत्मा कैसा है ? ॐ आनंद... ॐ शांति...'- ऐसा करके उस आत्मा को जाने तो मुक्त हो जाय। और 'छोरे का क्या होगा ? खेती का क्या होगा ?' किया तो बैल बनो बेटा ! जाओ।

इसीलिए मन को संसार में नहीं लगाना। नाव पानी में रहे लेकिन पानी नाव में नहीं रहे। शरीर संसार में रहे किंतु अपने दिमाग में संसार नहीं घुसे। अपने दिमाग में तो 'ॐ आनंद... ॐ शांति... ॐ माधुर्य... संसार सपना, परमात्मा अपना...'- ऐसा चिंतन चलता रहे। चिंतन करके निश्चिंत नारायण में विश्रांति पायें, निश्चिंत नारायण- व्यापक ब्रह्म में आयें। ❑

बार-बार जन्म लेना और मरना महादुःख-रूप है। मनुष्य-जन्म ही एक ऐसा अवसर है जिसमें इस महादुःख से छूटने का सौभाग्य मिलता है। तुम अपनी समझ का सदुपयोग करो, अपने सत्-अनुभवों का आदर करो और सत्पुरुषों एवं सत्शास्त्रों से मार्गदर्शन पाकर अपना जीवन सफल बना लो। **(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'कर्म का अकाट्य सिद्धांत' से)** ❑

जीवनशक्ति का विकास

(गतांक से आगे)

(२) **भाव का प्रभाव** : ईर्ष्या, घृणा, तिरस्कार, भय, कुशंका आदि कुभावों से जीवनशक्ति क्षीण होती है। दिव्य प्रेम, श्रद्धा, विश्वास, हिम्मत और कृतज्ञता जैसे सद्भावों से जीवनशक्ति पुष्ट होती है। किसी प्रश्न के उत्तर में 'हाँ' कहने के लिए सिर को आगे-पीछे हिलाते हैं। सिर को वैसे हिलाने से जीवनशक्ति का विकास होता है। नकारात्मक उत्तर में सिर को दायें-बायें घुमाते हैं। सिर को वैसे घुमाने से जीवनशक्ति कम होती है।

हँसने से और मुस्कराने से जीवनशक्ति बढ़ती है। इतना ही नहीं, हँसते हुए व्यक्ति को या उसके चित्र को भी देखने से जीवनशक्ति बढ़ती है। इसके विपरीत रोते हुए, उदास, शोकातुर व्यक्ति को या उसके चित्र को देखने से जीवनशक्ति का ह्रास होता है।

व्यक्ति जब प्रेम से सराबोर होकर 'हे भगवान ! हे खुदा ! हे प्रभु ! हे मालिक ! हे ईश्वर !' कहते हुए, अहोभाव से 'हरि बोल' कहते हुए हाथों को आकाश की ओर उठाता है तो जीवनशक्ति बढ़ती है। डॉ. डायमंड इसको 'थायमस जेस्चर' कहते हैं। मानसिक तनाव, खिंचाव व दुःख-शोक के समय यह क्रिया करने से और 'हृदय में दिव्य प्रेम की धारा बह रही है'

ऐसी भावना करने से जीवनशक्ति की सुरक्षा होती है । कुछ शब्द ऐसे हैं जिनके सुनने से चित्त में विश्रांति मिलती है, आनंद और उल्लास आता है । धन्यवाद देने से, धन्यवाद के विचारों से हमारी जीवनशक्ति का विकास होता है । ईश्वर को धन्यवाद देने से अंतःकरण में खूब लाभ होता है ।

मि. डिलंड कहते हैं : ''मुझे जब अनिद्रा का रोग घेर लेता है तब मैं शिकायत नहीं करता कि मुझे नींद नहीं आती... नींद नहीं आती । मैं तो परमात्मा को धन्यवाद देने लग जाता हूँ : 'हे प्रभु ! तू कितना कृपानिधि है ! माँ के गर्भ में था तब तूने मेरी रक्षा की थी । मेरा जन्म हुआ तो कितना मधुर दूध बनाया ! ज्यादा फीका होता तो ऊबान आती, ज्यादा मीठा होता तो डायबिटीज होता । न ज्यादा ठंडा न ज्यादा गरम । जब चाहे, जितना चाहे पी लिया । बाकी वहीं-का-वहीं सुरक्षित । शुद्ध-का-शुद्ध । माँ हरी सब्जी खाती है और श्वेत दूध बनाती है । गाय हरी घास खाती है और श्वेत दूध बनाती है । वाह प्रभु ! तेरी महिमा अपरंपार है । तेरी गरिमा का कोई बयान नहीं कर सकता । तूने कितने उपकार किये हैं हम पर ! कितने सारे दिन आराम की नींद दी ! आज के दिन नींद नहीं आयी तो क्या हर्ज है ? तुझको धन्यवाद देने का मौका मिल रहा है ।' इस प्रकार धन्यवाद देते हुए मैं ईश्वर के उपकार को टूटी-फूटी भाषा में गिनने लगता हूँ इतने में तो नींद आ जाती है ।''

डॉ. डायमंड का कहना ठीक है कि धन्यवाद के भाव से जीवनशक्ति का विकास होता है । जीवनशक्ति क्षीण होती है तभी अनिद्रा का रोग होता है । रोगप्रतिकारक शक्ति क्षीण होती है तभी रोग हमला करते हैं ।

वेद को सागर की तथा ब्रह्मवेत्ता महापुरुषों को मेघ की उपमा दी गयी है । सागर के पानी से चाय नहीं बन सकती, खिचड़ी नहीं पक सकती, दवाइयों में वह काम नहीं आता, उसे पी नहीं सकते । वही सागर का खारा पानी सूर्य की किरणों से वाष्पीभूत होकर ऊपर उठ जाता है और मेघ बनकर बरसता है तो मधुर बन जाता है । फिर वह सब कामों में आता है । स्वाति नक्षत्र में वही पानी सीप में पड़कर मोती बन जाता है । ऐसे ही अपौरुषेय तत्त्व में ठहरे हुए ब्रह्मवेत्ता जब शास्त्रों के वचन बोलते हैं तो उनकी अमृतवाणी हमारी जीवनशक्ति का विकास करके हमें जीवनदाता के करीब ले जाती है, जीवनदाता से मुलाकात करने की क्षमता दे देती है । इसीलिए संत कबीरजी ने कहा :

सुख देवें दुःख को हरें, करें पाप का अंत ।
कह कबीर वे कब मिलें, परम सनेही संत ॥

परम के साथ उनका स्नेह है । हमारा स्नेह रुपयों में, अनुकूल परिस्थितियों में, पदोन्नति में, मान-मिल्कियत में, पत्नी-पुत्र-परिवार में, धन में, नाते-रिश्तों में, स्नेही-मित्रों में, मकान-दुकान में बँटा हुआ है । जिनका केवल परम के साथ स्नेह है ऐसे महापुरुष जब मिलते हैं तब हमारी जीवनशक्ति के शतशः झरने फूट निकलते हैं ।

इसीलिए परमात्मा के साथ सम्पूर्ण तादात्म्य साधे हुए, आत्मभाव में, ब्रह्मभाव में जगे हुए संत-महात्मा-सत्पुरुषों के प्रति, देवी-देवता के प्रति हृदय में खूब अहोभाव भर के दर्शन करने का, उनके चित्र या फोटो अपने घर में, पूजाघर में, प्रार्थना-खंड में रखने का माहात्म्य बताया गया है । उनके चरणों की पूजा, आराधना, उपासना की महिमा शास्त्रों में खूब गायी गयी है । 'श्रीगुरुगीता' में भगवान शंकर भी भगवती पार्वती से कहते हैं :

यस्य स्मरणमात्रेण ज्ञानमुत्पद्यते स्वयम् ।
सः एव सर्वसम्पत्तिः तस्मात्संपूजयेद् गुरुम् ॥

'जिनके स्मरणमात्र से ज्ञान अपने-आप प्रकट होने लगता है वे श्रीगुरुदेव ही सर्व (शमदमादि) सम्पदा रूप हैं, अतः श्रीगुरुदेव की पूजा करनी चाहिए ।' **(क्रमशः)**

(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'जीवन विकास' से) ☐

मनुष्य-जन्म का मूल्य

(पूज्य बापूजी के सत्संग से)

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं :

येषां त्वन्तगतं पापं जनानां पुण्यकर्मणाम् ।
ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता भजन्ते मां दृढव्रताः ॥

'निष्कामभाव से श्रेष्ठ कर्मों का आचरण करनेवाले जिन पुरुषों का पाप नष्ट हो गया है, वे राग-द्वेषजनित द्वन्द्वरूप मोह से मुक्त दृढ़निश्चयी भक्त मुझको सब प्रकार से भजते हैं ।'

(गीता : ७.२८)

'यह करूँ कि वह करूँ ? भगवान के रास्ते जाऊँ कि पैसा कमाऊँ ?'- इसको द्वन्द्व बोलते हैं । जिसके पापों का अंत हो गया है और पुण्यकर्म जोर मारते हैं उसके जीवन में से द्वन्द्व चला जाता है और वह दृढ़ निश्चय करता है कि मुझे तो ईश्वर को ही पाना है । जिसको सचमुच ईश्वरप्राप्ति करनी है उसको कोई हिला नहीं सकता । उसको सेवा में रुचि रहेगी, वह खूब तत्परता से सेवा करेगा । वह नियम-निष्ठा में तत्पर होगा व दृढ़व्रती हो जायेगा ।

प्रभु के प्यारों को समझाया नहीं जाता ।
कदम रखते आगे तो लौटाया नहीं जाता ॥
ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता भजन्ते मां दृढव्रताः ।

जिसके जीवन में दृढ़ व्रत नहीं है, दृढ़ता नहीं है और जो भगवान का महत्त्व नहीं जानता, उसको भगवान के धाम में भी रहने को मिल जाय फिर भी वहाँ से गिरता है बेचारा ! जय-विजय भगवान के धाम में रहते थे किंतु भगवान को महत्त्वपूर्ण नहीं जानते थे तो गिरे । जो अपने जीवन का महत्त्व जितना जानता है, उतना ही सत्संग का महत्त्व जानेगा । जिसको मनुष्य-जन्म की कद्र नहीं है वह अभागा सत्संग की भी कद्र नहीं कर सकता । जिसको अपनी मनुष्यता की कद्र है, सत्संग की कद्र है वह अपनी वाणी को व्यर्थ नहीं जाने देगा, अपने समय को व्यर्थ नहीं जाने देगा, अपनी सेवा में निखार लायेगा, अपना आग्रह नहीं रखेगा और समता बनाये रखेगा ।

जिसको मनुष्य-जन्म का मूल्य पता है वह किसीसे द्वेष रखेगा ? नहीं रखेगा । अगर द्वेष रखता है तो घाटे में ही पड़ जाता है । मनुष्य-जन्म का मूल्य उसको पता नहीं । द्वेष जिसके हृदय में रहता है उसके हृदय में भगवद् प्रकाश नहीं हो सकता ।

काम न क्रोध न लोभ कछु एकल भला अनीह ।
साधक ऐसा चाहिए जैसे बन का सिंह ॥

जैसा जंगल का शेर, ऐसा ही वह निर्भीक नारायण के रास्ते जाता है । ईश्वर को पाना है तो पाना है, बात पूरी हो गयी । उसको पाये बिना हजारों-लाखों-करोड़ों जन्म झख मारो, कुछ मिलनेवाला नहीं, कुछ टिकनेवाला नहीं । कितना भी सीखो, कितना भी करो, कुछ रहनेवाला नहीं है । ईश्वर के सिवाय कहीं भी मन लगाया तो अंत में रोना ही पड़ेगा । अंत में भी रोना पड़ेगा, बीच में भी कराहना पड़ेगा, तड़पना पड़ेगा । ऐसा नहीं कि अंत में ही रोना पड़ेगा, बीच में भी कुररी (टिटिहरी पक्षी) की नाईं कुरलाना पड़ेगा । 'इसने ऐसा किया, उसने ऐसा कहा... इसकी यह बात सुनी, उसकी वह बात सुनी...' होती है अपनी बेईमानी लेकिन बोलते हैं, 'आजकल ऐसा सुनायी पड़ता है ।' जो लोग कुप्रचार करते हैं न, वे बोलते हैं, 'सब ऐसा बोलते हैं, वैसा बोलते हैं...' ऐसा क्या बोलते हैं ? तू ही तो बोलता है । ऐसे लोगों को अपने जीवन का मूल्य पता नहीं और हृदय की शुद्धि की

कीमत नहीं है। उनके मन में द्वन्द्व है द्वन्द्व।

द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता... अर्थात् द्वन्द्व-मोह से ठीक तरह से मुक्त। हम अगर द्वन्द्व-मोह से थोड़ा भी कम मुक्त होते तो हमारे जीवन में तो गुरुद्वार पर कितने उतार-चढ़ाव आये... ! साल में नहीं, एक-एक दिन में। एक दिन में कितने-कितने हादसे होते थे ! कभी कोई साजिश तो कभी कुछ और... क्या-क्या होता था ! लेकिन हमको तो कोई असर ही नहीं।

ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता भजन्ते मां दृढव्रताः।

जो दृढ़ता से निश्चय करता है कि मुझे ईश्वर को पाना ही है उसके लिए संसार-सागर तरना गाय के खुर को लाँघने के बराबर है और जिस अभागे का ईश्वरप्राप्ति का निश्चय दृढ़ नहीं है उसके लिए तो संसार बड़ा सागर है। उसको पता ही नहीं चलेगा कि मेरे में द्वेष आदि हैं कि नहीं। वह बोलेगा, 'मुझमें तो द्वेष है नहीं।' द्वेष के साथ इतनी आत्मीयता हो जाती है कि लगता ही नहीं कि मेरे में द्वेष है। शास्त्र कहते हैं : **काम न क्रोध न लोभ कछु...** काम, क्रोध, लोभ, राग, द्वेष, अभिनिवेश - इन सबको जीव जितना पकड़ रखेगा, पाल रखेगा उतना ही ईश्वर से विमुख रहेगा।

भलाई करने से आदमी भला नहीं होता है, बुराई छोड़ने से आदमी भला होता है। नहीं तो अंदर में बुराई रखकर भी लोग भलाई का काम करके दिखा देते हैं। किसीके लिए हृदय में द्वेष रखना अपने हृदय को मलिन करना है। हमारे मन में किसीके लिए राग है, किसीके लिए द्वेष है, किसीके लिए भय है, किसीके लिए शारीरिक आकर्षण है यह हम जानते हैं। अगर ईश्वर के लिए आकर्षण महत्त्वपूर्ण लगता हो तो यह सारा कचरा निकल जायेगा पर ईश्वर के लिए महत्त्व नहीं है न ! ईश्वर महत्त्वपूर्ण नहीं लगते हैं तो फिर कोई अपना, कोई पराया... किसीसे राग, किसीसे द्वेष... कोई भय, कोई शोक तो कोई चिंता... बस, जैसे मक्खन निकालने के लिए मथनी से दही मथते रहते हैं, ऐसे ही आदमी का जीवन इनसे मथ जाता है। इसमें मक्खन तो क्या निकलता है, बुलबुले ही निकलते हैं और कुछ नहीं। यह मिल गया, वह मिल गया... आखिर देखो तो आ गया बुढ़ापा अथवा कोई बीमारी ! हो गये लाचार ! क्या मिला ? ईश्वर के सिवाय कुछ भी मिलेगा तो अंत में उदासी, लाचारी हाथ लगेगी। मकान साथ में नहीं चलेगा। नौकरी, गाड़ी मरते समय क्या काम आयेगी ? 'ऐंह... ऐंह... पानी दे दो। मेरे पैसे कहाँ हैं ?...' ऐसा ही होगा कि और कुछ होगा नारायण ?

तो बार-बार प्रीतिपूर्वक भगवान का चिंतन करो। राग में, द्वेष में, निंदा में, चुगली में समय को व्यर्थ न गँवाओ। इससे बड़ी हानि होती है। साध्य को पाने का लक्ष्य बनाओ। साधन लेकर कब तक घूमते रहोगे ? साध्य को पाने का लक्ष्य सद्गुरु की कृपा से बनता है, फिर आती है 'गीता' की बात : जिनके पापों का अंत हो गया है वे पुण्यकर्म उदय हुए और दृढ़व्रती हुए भक्त मुझको भजते हैं।

कुल मिलाकर ईश्वरप्राप्ति का दृढ़ संकल्प और बार-बार पुण्यचेष्टा करो जिससे पापों का अंत हो जाय। जैसे बार-बार निंदा करने से पाप बढ़ जाते हैं तो अशांति बढ़ जाती है, ऐसे ही बार-बार जप-ध्यान करने से पाप नष्ट होकर पुण्य बढ़ते हैं तो आनंद आ जाता है। बार-बार पुण्य होता है तो हृदय खिला रहता है और बार-बार द्वेष होता है तो हृदय चिंता-तनाव में रहता है। राग-द्वेष हृदय में रखा तो उस हृदय को गोली मार दो। किसीका बुरा सोचो नहीं, किसीका बुरा चाहो नहीं, किसीका बुरा करो नहीं और अपनेको भगवान से पृथक्, दूर, तुच्छ मानो नहीं।

यह निश्चय करके दृढ़तापूर्वक साधना में लग जाओ कि भगवान के सिवाय जीवन जीना गधा-मजूरी है। मुझे इसी जन्म में गुरुज्ञान को पचाना है, भगवान को पाना है, जीवन्मुक्ति का आनंद लेना है। □

जय सद्गुरु देवन देव वरं...

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

व्यासपूर्णिमा का पर्व मनुष्य-जाति के गर्व की खबर है, मनुष्य-जाति की महानता की खबर है। मनुष्य ईश्वर को पा सकता है, ईश्वरप्राप्त होकर पूजा जा सकता है और दूसरों का छुपा हुआ ईश्वरत्व जगा सकता है। गुरु का आदर अपनी मनुष्यता का आदर है, ज्ञान का आदर है, अपने उद्देश्य का आदर है। हमने अपने गुरुजी का आदर नहीं किया होता तो गुरुजी को क्या घाटा पड़ता ? लेकिन आदर किया तो हमें पाने को बाकी क्या रहा ? गुरुजी का आदर किया तो हमें ही फायदा हुआ। गुरुजी तो ऐसी जगह पर पहुँचे हैं कि आदर हो-अनादर हो, हम उनके पास जायें-न जायें गुरुजी को कोई घाटा नहीं पड़ता है परंतु हम उनके पास नहीं जाते तो हम ही घाटे में रह जाते।

श्री भोलेबाबाजी ने ऐसे ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरु की स्तुति गायी है :

जय सद्गुरु देवन देव वरं,
निज भक्तन रक्षण देह धरं।
पर दुःख हरं सुख शांति करं,
निरुपाधि निरामय दिव्य परं ॥

सद्गुरु दूसरों के दुःख हर लेते हैं, जीवन में सुख और शांति भर देते हैं।

हे गुरुदेव ! आप कैसे हो ? निरुपाधि हो, निरामय हो और दिव्य हो। 'मेरी दुकान है, मकान है, मैं फलाना हूँ...' ऐसी उपाधि में आप बँधे नहीं हो। 'मैं हूँ अपने आप, हर परिस्थिति का बाप !' ऐसी आपकी दिव्य अनुभूति है। इन आँखों से अथवा बुद्धि से आपका तोल-मोल नहीं हो सकता है। इनसे तो आपका बाहर का श्रीविग्रह ही दिखता है लेकिन आप कितने व्यापक हो, हमारी कितनी रक्षा कर रहे हो या एक साथ कितनों के चित्त में प्रेरणा करते हो, स्वप्न में आते हो इसकी गिनती कोई नहीं कर सकता। भगवान श्रीकृष्ण और राम जिस तत्त्व में रहकर जिस सहज स्वभाव में रमण करते हैं, उसी आत्मस्वभाव में आप रमण करते हैं।

जय काल अबाधित शांतिमयं...

शरीर पर काल का प्रभाव पड़ेगा, खान-पान पर, वस्तुओं पर काल का प्रभाव पड़ेगा लेकिन हे गुरुदेव ! उसको जाननेवाला काल से अबाधित तत्त्व आप हो और हमको भी ऐसा बना रहे हो, यह आपकी कृपा है। इस आरती में भी साधक की कितनी उन्नति छुपी है !

जन पोषक शोषक ताप त्रयं।

आधिदैविक ताप, आधिभौतिक ताप और आध्यात्मिक ताप - लोगों के इन तीनों तापों को आप शोषित कर आत्मज्ञान से उनको पोषित कर देते हो। शरीर से, मन से अथवा कुदरती कोप से थके-माँदे लोगों को आपके दर्शन और वाणी से तीन तापों से आराम मिलता है और उनका पोषण होता है।

भय भंजन देत परम अभयं,
मन रंजन भाविक भाव प्रियं ॥

मनोरंजन करते-करते विनोद-विनोद में आ गया ज्ञान। सत्संग में पहले जब आये थे उस समय कैसी मति, कैसी गति और कैसा दिमाग

था ? सत्संग में आने के बाद समझ कितनी बढ़ गयी ! मेहनत भी नहीं पड़ी । स्कूल, कॉलेज की पढ़ाई में तो परिश्रम पड़ता है और बाद में मिलता है कंकड़-पत्थर, सांसारिक उपलब्धि - नौकरी करो, धंधा करो, पैसे कमाओ फिर सुखी होने के लिए फर्नीचर लाओ, शादी करो, डिस्को करो, विषय-विकारों में उलझो और मरो, मरो और जन्मो, जन्मो और मरो... । गुरु के ज्ञान में तो परिश्रम भी नहीं और मिलती इतनी ऊँची समझ है कि ओहो !... सब दुःखों और सुखों के सिर पर पैर रखकर परमात्मा की प्राप्ति ! दुनिया के कितने भी प्रमाणपत्र लेकर आदमी इतना सुयोग्य, इतना महान नहीं बनता है जितना सत्संग से बनता है । दुनिया की पदवियाँ मेरे पास होतीं तो इतना नहीं मिलता जितना मेरे को गुरुजी की कृपा से, सत्संग से मिला है ।

सत्संग से तो ऐहिक लाभ के साथ-साथ स्वर्ग, अतल, वितल, तलातल, रसातल का ज्ञान, आत्मा-परमात्मा का ज्ञान, सम रहने का ज्ञान आदि जितने भी ज्ञान हैं वे सारे ज्ञान, प्रकाश, आनंद और रस मुफ्त में मिलते हैं ।

ममतादिक दोष नशावत हैं...

ममता के साथ जो दोष हैं - अहंता आदि वे नष्ट होते हैं ।

शम आदिक भाव सिखावत हैं ।

मन को रोकना, सदैव सम रहना आदि सद्भाव गुरुदेव सिखाते हैं । यह आरती बहुत ऊँची है और साधक के लिए मंगलकारी है ।

जग जीवन पाप निवारत हैं,
भवसागर पार उतारत हैं ॥
कहुँ धर्म बतावत ध्यान कहीं,
कहुँ भक्ति सिखावत ज्ञान कहीं ।

कर्म-बंधन से बचने के लिए धर्म का उपदेश भी देते हैं, ध्यान भी सिखाते हैं, भक्ति भी देते हैं और ज्ञान का प्रकाश भी देते हैं ।

उपदेशत नेम अरु प्रेम तुम्हीं...

खान-पान, रहन-सहन व व्यावहारिक जगत के अन्य नियमों का उपदेश भी देते हैं और परमात्म-प्रेम बढ़े तथा सभीके अंदर स्थित परमात्म-तत्त्व का ज्ञान हो, ऐसे प्रेम का भी उपदेश देते हैं । आप प्राणिमात्र के प्रति सद्भाव का भी उपदेश देते हैं ।

करते प्रभु योग अरु क्षेम तुम्हीं ॥

जो चीजें, स्थिति, अवस्था नहीं मिली उनका योग भी आप करा देते हो और उनका पालन भी आप ही कर देते हो ।

मन इन्द्रिय जाही न जान सके,
नहीं बुद्धि जिसे पहचान सके ।
नहीं शब्द जहाँ पर जाय सके,
बिनु सद्गुरु कौन लखाय सके ॥

जिसे मन और इन्द्रियाँ नहीं जान सकतीं, बुद्धि जिस तत्त्व को नहीं पहचान सकती उस तत्त्व को आपके बिना कौन दिखा सकता है ?

नहीं ध्यान न ध्यातृ न ध्येय जहाँ,
नहीं ज्ञातृ न ज्ञान न ज्ञेय जहाँ ।
नहीं देश न काल न वस्तु तहाँ,
बिनु सद्गुरु को पहुँचाय वहाँ ॥

यह सूक्ष्म बात है । हमारे पास तो मन, इन्द्रियाँ और बुद्धि है। ध्याता-ध्यान-ध्येय, ज्ञाता-ज्ञान-ज्ञेय तथा देश-काल-वस्तु यह सब मन और इन्द्रियों तक है, प्रकृति के राज्य में है । गुरुदेव ! आप ही इस प्रकृति के राज्य से पार पहुँचा देते हो ।

नहीं रूप न लक्षण ही जिसका,
नहीं नाम न धाम कहीं जिसका ।
नहीं सत्य असत्य कहाय सके,
गुरुदेव ही ताही जनाय सके ॥

वह कौन है जिसका रूप और लक्षण नहीं है ? वास्तव में हम वही आत्मा हैं । जिसका रूप और लक्षण है वह सब शरीर है - स्थूल शरीर,

सूक्ष्म शरीर, कारण शरीर। निद्रा कारण शरीर में आती है, स्वप्न सूक्ष्म शरीर में आता है, क्रिया स्थूल शरीर में होती है। क्रिया होकर चली जाती है, स्वप्न आकर चला जाता है, निद्रा आकर चली जाती है। उन सबको जाननेवाला कौन है ? वहाँ गुरु ही पहुँचा सकते हैं, व्यक्ति खुद नहीं जा सकता है।

गुरु कीन कृपा भव त्रास गयी,
मिट भूख गयी छुट प्यास गयी।
नहीं काम रहा नहीं कर्म रहा,
नहीं मृत्यु रहा नहीं जन्म रहा ॥

भूख कैसे मिटी ? क्या फिर खाना नहीं खायेंगे ? पानी नहीं पीयेंगे ? **'मिट भूख गयी छुट प्यास गयी'** का मतलब यह नहीं कि गुरु का दर्शन किया, गुरुजी राजी हो गये, उन्होंने कृपा की तो भूख नहीं लगेगी। भूख न लगे तब तो बीमारी हो गयी है। फिर जीयेगा कैसे ? इसका तात्त्विक अर्थ समझना है। विषय-विकारों की भूख और संसार में सब होते हुए भी जो अतृप्ति की प्यास है, वह मिट जायेगी, तृप्ति आ जायेगी, संतुष्टि आ जायेगी। शरीर की भूख-प्यास मिट गयी हो तो थोड़ी देर के लिए लेकिन मेरी अपनी ही भूख-प्यास मिट जाय। भूखा जीव तो भटकता है जन्म-जन्म में, कई माताओं के गर्भों में जाता है। भूख और प्यास मिट गयी अर्थात् वासना मिट गयी, अहंता-ममता मिट गयी तो फिर क्या जाना-आना ? काहे को गर्भवास होगा ? चौरासी लाख योनियों से छूट जायेगा।

भग राग गया हट द्वेष गया,
अघ चूर्ण भया अणु पूर्ण भया।
नहीं द्वैत रहा सम एक भया,
भ्रम भेद मिटा मम तोर गया ॥
नहीं मैं नहीं तू नहीं अन्य रहा,
गुरु शाश्वत आप अनन्य रहा।
गुरु सेवत ते नर धन्य यहाँ,
तिनको नहीं दुःख यहाँ न वहाँ ॥

हमने गुरुजी का सेवन किया, हमको इस लोक में भी दुःख नहीं और कालांतर में भी जन्म-मरण का दुःख नहीं। दुःखद अवस्थाएँ आयें, दुःखद परिस्थितियाँ आयें तो दुःखी होकर उनमें पच मरें ? नहीं, दुःख के साक्षी बनें- यह गुरु का ज्ञान हमारे साथ है। दुनिया का सारा धन एक आदमी को दे दो, सौंदर्य व सत्ता दे दो किंतु गुरु का ज्ञान नहीं है तो वह अभागा है, दुःखी होगा। और कुछ भी न हो, नरक में भेज दो परंतु ब्रह्मज्ञानी गुरु की दीक्षा और ज्ञान दे दो फिर वह नरक में भी रहेगा तो नरक स्वर्ग हो जायेगा। जिनके जीवन में गुरुज्ञान, तत्त्वज्ञान नहीं है, वे कितने ही बड़े पद पर क्यों न चले जायें, फिर भी जरा-जरा-सा दुःख उनको हिलाता रहेगा।

जय सद्‌गुरु देवन देव वरं...

सत् अर्थात् जो पहले था, अभी है और बाद में रहेगा। अभी आप इधर हैं इसका मतलब जब आप इधर नहीं थे तब कहीं-न-कहीं थे। चाहे जबलपुर में थे, नागपुर में थे, छिन्दवाड़ा में थे, रायपुर में थे, दिल्ली में थे, मुंबई में थे, हरिद्वार में थे, काशी में थे, देश में थे, विदेश में थे, आप जन्म के पहले कहीं थे और मरने के बाद कहीं रहेंगे तो आप शाश्वत हैं। शरीर नश्वर है। जब शरीर नश्वर है तो दुःख शाश्वत कैसे होगा ? जो दुःख से दब जाते हैं वे तो निगुरे हुए। दुःख तो आयेगा पर गुरु के भक्त दुःख में डूबेंगे नहीं, दुःख का सदुपयोग करेंगे। सुख आयेगा, सुख में डूबेंगे नहीं, सुख का भी सदुपयोग करेंगे सेवा में, सत्कर्म में।

देखो, आरती तो क्या मजे से सभी गा लेते हैं किंतु गुरु के बिना इसका ज्ञान कैसे समझ में आयेगा ? कई लोग ग्रंथ कंठस्थ कर लेते हैं

लेकिन गुरु उसका रहस्य नहीं खोलते हैं तो वे रट-रटाकर पूरा ग्रंथ बोल देंगे, पूरी 'गीता' बोले देंगे लेकिन जीवन में देखो तो भूख और प्यास नहीं मिटेगी । वाहवाही की प्यास रहेगी, विषय-विकारों की भूख रहेगी । गुरु ने आत्मज्ञान की तृप्ति दे दी तो सांसारिक विषय-विकारों की भूख भी मिट जायेगी और वासना की प्यास भी मिट जायेगी । फिर काहे को संसार में आना ? काहे को किसीके गर्भ में जाना ? गर्भ मिले-न मिले, फिर नाली में बहना ! जो आत्मा में तृप्त है वह माया के भुलावे में क्यों भटकेगा ? वह तो आत्मा-परमात्मा से मिलकर ब्रह्ममय हो जायेगा । □

संसार आँख और कान द्वारा अंदर घुसता है। जैसा सुनोगे वैसे बनोगे तथा वैसे ही संस्कार बनेंगे । जैसा देखोगे वैसा स्वभाव बनेगा । जो साधक सदैव आत्मसाक्षात्कारी महापुरुष का ही दर्शन व सत्संग-श्रवण करता है उसके हृदय में बसा हुआ महापुरुषत्व भी देर-सवेर जागृत हो जाता है।

गुरु अपने शिष्य से और कुछ नहीं चाहते । वे तो कहते हैं :

तू मुझे अपना उर आँगन दे दे,
मैं अमृत की वर्षा कर दूँ ।

तुम गुरु को अपना उर-आँगन दे दो । अपनी मान्यताओं और अहं को हृदय से निकालकर गुरु के चरणों में अर्पण कर दो । गुरु उसी हृदय में सत्यस्वरूप प्रभु का रस छलका देंगे । गुरु के द्वार पर अहं लेकर जानेवाला व्यक्ति गुरु के ज्ञान को पचा नहीं सकता, हरि के प्रेमरस को चख नहीं सकता ।

नम्र भाव से, कपटरहित हृदय से गुरु के द्वार जानेवाला कुछ-न-कुछ पाता ही है ।

(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'गुरुपूर्णिमा संदेश' से)

पूज्य बापूजी : राष्ट्रसुख के संवर्धक

''पूज्य बापूजी द्वारा दिया जानेवाला नैतिकता का संदेश देश के कोने-कोने में जितना अधिक प्रसारित होगा, जितना अधिक बढ़ेगा, उतनी ही मात्रा में राष्ट्रसुख का संवर्धन होगा, राष्ट्र की प्रगति होगी । जीवन के हर क्षेत्र में इस प्रकार के संदेश की जरूरत है ।'' **– श्री लालकृष्ण आडवाणी, पूर्व उपप्रधानमंत्री व केन्द्रीय गृहमंत्री, भारत सरकार ।**

राष्ट्र उनका ऋणी है

''पूज्य बापूजी की दिव्य वाणी का लाभ लेकर मैं धन्य हो गया । संतों की वाणी ने हर युग में नया संदेश दिया है, नयी प्रेरणा जगायी है । कलह, विद्रोह और द्वेष से ग्रस्त वर्तमान वातावरण में बापूजी जिस तरह सत्य, करुणा और संवेदनशीलता के संदेश का प्रसार कर रहे हैं, उसके लिए राष्ट्र उनका ऋणी है । राष्ट्र के युवक-युवतियों की नींव मजबूत करनेवाला जो संयम है, जिससे सारी सफलता पाना आसान हो जाता है, उसके संबंध में सत्संग व ध्यान योग शिविरों में उपदेश देकर बापूजी जो हर प्रकार का अथक प्रयास कर रहे हैं, उसके लिए भी राष्ट्र उनका ऋणी रहेगा ।'' **– श्री चंद्रशेखर, भूतपूर्व प्रधानमंत्री, भारत सरकार ।**

गरीबों व पिछड़ों को ऊपर उठाने के कार्य चालू रहें

''गरीबों और पिछड़ों को ऊपर उठाने के कार्य आश्रम द्वारा चलाये जा रहे हैं, मुझे प्रसन्नता है । मानव-कल्याण के लिए, विशेषतः प्रेम व भाईचारे के संदेश के माध्यम से किये जा रहे विभिन्न आध्यात्मिक एवं मानवीय प्रयास समाज की उन्नति के लिए सराहनीय हैं ।'' **–डॉ. ए.पी.जे. अबदुल कलाम, तत्कालीन राष्ट्रपति, भारत गणतंत्र ।** □

महावेदांती श्री तोतापुरीजी महाराज

(गतांक से आगे)

सद्गुरु ने सत्शिष्य को पहचाना :

श्रीमत् तोतापुरीजी ने प्रथम दृष्टि में ही श्री रामकृष्णदेव की अत्यंत उच्च आध्यात्मिक संभावनाओं को पहचान लिया । वे इस तरुण पुजारी के प्रति आकृष्ट हुए तथा अपने मन में उन्होंने यह अनुभव किया कि ये सामान्य पुरुष नहीं हैं ।

वेदांत-साधना के लिए इस प्रकार के उत्तम अधिकारी बहुत कम देखने में आते हैं । भलीभाँति निरीक्षण करने के पश्चात् वे उनके पास गये और बोले : ''तुम उत्तम अधिकारी प्रतीत हो रहे हो, क्या तुम वेदांत-साधना करना चाहते हो ?''

श्री रामकृष्ण ने उठकर विनम्र भाव से उनका अभिवादन किया और उत्तर दिया : ''करने-न करने के बारे में मैं कुछ भी नहीं जानता, मेरी माँ सब कुछ जानती हैं, उनका आदेश मिलने पर कर सकता हूँ ।''

युवक की निश्छल सरलता ने साधु को मुग्ध कर दिया । एक क्षणिक मुसकान के साथ उन्होंने कहा : ''तो फिर जाओ, अपनी माँ से पूछकर मुझे जवाब दो क्योंकि दीर्घकाल तक मैं यहाँ पर नहीं ठहरूँगा ।''

माँ काली का आदेश :

रामकृष्णदेव माँ काली के मंदिर में गये और भावाविष्ट हो गये । माँ ने उन्हें अपनी दिव्य वाणी में स्पष्ट आदेश दिया : ''जाओ, वेदांत-साधना करो । तुम्हें मेरे वास्तविक स्वरूप का अनुभव कराने के लिए ही उन महापुरुष का यहाँ आगमन हुआ है ।''

रामकृष्णदेव शीघ्र ही वापस लौटे । उनका चेहरा दिव्य आनंद से दमक रहा था । उन्होंने अपनी माँ के आदेश को तोतापुरीजी के समक्ष निवेदित किया : ''हाँ जी, माँ ने आपसे वेदांत सीखने के लिए मुझे निर्देश दिया है ।''

तोतापुरीजी को यह जानने में कुछ समय लगा था कि उनका भावी शिष्य अपनी जन्म देनेवाली माँ के पास नहीं बल्कि काली-मंदिर में प्रतिष्ठित माँ जगदम्बा के श्रीविग्रह के पास गया था । सुदक्ष गुरु ने युवक की भावनाओं को ठेस नहीं पहुँचायी, क्योंकि उनका यह दृढ़ विश्वास था कि ज्ञानमार्ग के साधन में प्रवृत्त होने पर उनके हृदय के पूर्वोक्त संस्कार शीघ्र ही दूर हो जायेंगे ।

तोतापुरीजी को बाद में यह समझने में देर नहीं लगी कि श्री रामकृष्ण पूरी तरह से जगन्माता काली पर उसी प्रकार निर्भर थे, जैसे बिल्ली का छोटा बच्चा अपनी माँ पर होता है । उनके जीवनीकार ने इसे बड़े सुंदर शब्दों में अभिव्यक्त किया है : '...श्री रामकृष्ण उस समय स्वतः प्रवृत्त होकर किसी कार्य को नहीं कर पाते थे । श्री जगदम्बा के बालक श्री रामकृष्णदेव, तब उन पर पूर्णतया निर्भर हो उनकी ओर दृष्टि निबद्ध कर दिन व्यतीत कर रहे थे तथा वे जैसे उनको घुमा-फिरा रही थीं, परमानंदित हो वे वैसे ही चल-फिर रहे थे । इसलिए जगन्माता भी उनके संपूर्ण भार को स्वीकार कर अपने, उद्देश्य विशेष के साधन के निमित्त श्री रामकृष्णदेव का निर्माण कर रही थीं ।'

श्री रामकृष्ण का निर्गुण उपासना में प्रवेश :

बंगाल के सुदूर ग्रामीण अंचल में जन्मे और पले श्री रामकृष्ण को दक्षिणेश्वर काली-मंदिर के पुजारी-पद पर दस से अधिक वर्ष हो गये थे ।

बचपन की उनकी ईश्वर-दर्शन की चाह बढ़कर ऐकान्तिक भक्ति में परिणत हो गयी थी जिसके फलस्वरूप जगन्माता के दर्शन पाकर वे शीघ्र ही पूरी तरह ईश्वरीय भाव में निमग्न हो गये थे। बाहरी लोग उन्हें पागल समझते क्योंकि उन्हें लगता कि ईश्वर-दर्शन की अंतहीन चेष्टा में इस व्यक्ति ने अपने पुजारी-पद के कर्तव्य को भी भुला दिया है। पर कुछ इने-गिने लोगों के लिए वे साक्षात् ईश्वर के अवतार थे। भैरवी ब्राह्मणी के मार्गदर्शन में उन्होंने सफलतापूर्वक समस्त तांत्रिक मतों का और तत्पश्चात् वैष्णव मतों का साधन किया था। फलस्वरूप, अंत में उन्हें भगवान कृष्ण का ज्योतिर्मय दर्शन प्राप्त हुआ था। उनके भीतर प्रेम का सर्वोत्कृष्ट रूप 'महाभाव' प्रकट हुआ था।

इस प्रकार सगुण ईश्वर की उपासना की पूर्ण सिद्धि हो जाने के बाद अब उन्होंने अपनी सर्वोच्च मार्गदर्शिका जगन्माता का आदेश सुना कि निर्गुण-निर्विशेष ईश्वर के उच्चतम रहस्यमय जगत में प्रवेश करने के लिए तैयार हो जाओ।

रोमाँ रोलां के अनुसार एक ओर श्री रामकृष्ण थे, जो उनकी आँखों के दर्पण के सामने जो कुछ घट रहा था, उन सबके जीते-जागते प्रतिबिम्बस्वरूप थे - एक द्विमुखी दर्पण की तरह, जो भीतर और बाहर दोनों ओर प्रतिबिम्बित करता है तो दूसरी ओर तोतापुरी थे, जो अपनी लौहसदृश बलिष्ठ देह तथा विशिष्ट शारीरिक और मानसिक बनावट के कारण भावनाओं और प्रेम से शून्य प्रतीत होते थे। इस प्रकार दोनों के व्यक्तित्व में असमानताएँ अधिक थीं।

श्री रामकृष्णदेव को संन्यास-दीक्षा :

तोतापुरीजी ने अपने इस नये शिष्य के साथ प्रारंभिक चर्चाएँ शुरू कीं। दूसरी बातों के साथ उन्होंने उन तैयारियों की भी चर्चा की, जो शिष्य को अद्वैत वेदांत के रहस्य में दीक्षित करने के लिए करनी पड़ती है। शिष्य को औपचारिक रूप से संन्यास का व्रत लेना पड़ता है। श्री रामकृष्ण संसार-त्याग के लिए तुरंत तैयार हो गये।

तब उन्हें बताया गया : ''वेदांत साधना में उपदिष्ट व प्रवृत्त होने से पूर्व उन्हें शिखा-सूत्र त्यागकर यथाशास्त्र संन्यास लेना पड़ेगा।''

श्री रामकृष्ण को अपनी जननी चंद्रामणि देवी का स्मरण कर थोड़ी हिचक हुई, क्योंकि तब उनकी वृद्धा माता उनके साथ दक्षिणेश्वर में ही रहती थीं। उन्हें लगा कि उनके संन्यास लेने से माँ चिंतित और आकुल हो जायेंगी। इसलिए उन्होंने तोतापुरीजी से अनुरोध किया कि वे सब अनुष्ठान एकांत में गोपनीय तरीके से होने चाहिए, जिससे उनकी माता को उनका पता न चले। गुरु ने शिष्य की भावना का समादर करते हुए कहा : ''ठीक है, जब शुभ मुहूर्त आयेगा, तब मैं तुम्हें गुप्त रूप से दीक्षित करूँगा।''

श्री तोतापुरीजी महाराज को गुरुरूप में स्वीकार करने के बाद श्री रामकृष्णदेव ने निःसंकोच भाव से उनके समीप आत्मसमर्पण कर उनके आदर्शों का अपार विश्वास के साथ पालन किया। गुरुदेव उनको जो कुछ करने को कह रहे थे, अक्षरशः वे उसका अनुष्ठान कर रहे थे।

सर्वप्रथम प्रार्थना-मंत्रों के उच्चारण के साथ आहुतियाँ दी गयीं : ''हे ब्रह्मन् ! तुम्हीं जगत में विशेष शक्तिमान तथा विभिन्न रूपों से प्रकट होकर विद्यमान हो। शरीर तथा मन की शुद्धि के द्वारा तत्त्वज्ञान को धारण करने की योग्यताप्राप्ति के निमित्त मैं अग्निरूप तुममें आहुति प्रदान कर रहा हूँ, तुम मुझ पर प्रसन्न होओ।... मैं ज्योतिस्वरूप बन सकूँ - स्वाहा।'' आदि।

तदनंतर उनको कौपीन, काषाय वस्त्र तथा नाम से विभूषित किया गया। कुछ लोगों का कथन है कि तोतापुरीजी ने ही संन्यास दीक्षा के समय गदाधर को 'रामकृष्ण' नाम प्रदान किया था।

(क्रमशः) ❑

ऐसे लोगन को का कहिये...

जब भी किसीसे मिलो, किसीको देखो, जब कुछ सुनो तब अपने मन का निरीक्षण करो। देखो कि क्या प्रभाव पड़ रहा है ? हर्ष-शोक के समय विचार करो और अपनेको शांत एवं समस्थिर रखने के लिए सावधान रहो। मन की प्रत्येक दशा के द्रष्टा बनो।

पापेन जायते व्याधिः पापेन जायते जरा।
पापेन जायते दैन्यं दुःखं शोको भयंकरः ॥
तस्मात् पापं महावैरं दोषबीजममंगलम्।
भारते सततं सन्तो नाचरन्ति भयातुराः ॥

'पाप से व्याधि होती है, पाप से ही जरावस्था दुःख देती है, पाप से ही दीन होना पड़ता है, पाप से ही भयंकर शोक-दुःख उत्पन्न होते हैं। इसलिए भारत के सज्जन-साधक इस महान वैरी, दोष के मूल और अमंगलकारी पाप का आचरण नहीं करते, इसके भय से घबराये रहते हैं।'

जब तक राग-द्वेष रहता है तब तक भक्ति, मुक्ति, शाति की चर्चा भले ही कोई करता रहे या सुनता रहे परंतु इनकी प्राप्ति नहीं होती।

सोई पंडित सोई पारखी सोई संत सुजान।
सोई शूर सुचेत सो सोई सुभट प्रभान ॥
सोई ज्ञानी सोई गुनी सोई दाता ध्यानि।
तुलसी जा के चित भई राग द्वेष की हानि ॥

'भागवत' में भगवान का कथन है कि इस संसार में विनाशी शरीर द्वारा अविनाशी सत्य तत्त्व को प्राप्त करने में ही विवेकियों के विवेक की और चतुरों की चतुराई की सर्वोपरि सिद्धि है।

मूर्ख तो इस बात को समझेंगे ही नहीं किंतु जो विचार कर सकते हैं उन्हें अवश्य ही विनाशी को ही सुख का आश्रय न मानकर अविनाशी का ज्ञान प्राप्त करना चाहिए। वह अविनाशी परमात्मा ही है, उसीका आश्रय लेना चाहिए।

भगवान का यह भी निर्णय है कि समझदार मनुष्य सात्त्विक गुणों की वृद्धि के लिए सात्त्विक वस्तुओं को ही स्वीकार करे। उससे धर्म पुष्ट होगा और उसके पश्चात् ही ज्ञान, स्मृति, विवेक प्राप्त होंगे।

सतोगुणी मनुष्य की सहायता देवता करते हैं, रजोगुणी मनुष्य की दैत्य और तमोगुणी व्यक्ति का पक्ष राक्षस लेते हैं।

भगवान ने यह भी कहा है कि जो साधक या सेवक अपनी वाणी का, मन का बुद्धि द्वारा निरोध नहीं करता उसके व्रत, तप, दान मिट्टी के कच्चे घड़े में स्थित पानी के समान चू जाते हैं।

जब तक भगवान में दृढ़ भक्ति नहीं होती तब तक काम-क्रोध-लोभादि विकार नष्ट नहीं होते, इनका कष्ट बना ही रहता है। भक्ति का ज्ञान संत-संग से होता है।

संत-संग द्वारा यह भी समझ में आ गया कि जब तक साधक सांसारिक वस्तुओं, व्यक्तियों से अपनेपन का संबंध नहीं तोड़ लेगा, सब कुछ परमेश्वर का मानकर निरासक्त नहीं होगा, तब तक मन संसार में फँसा रहेगा, हटेगा नहीं। जब तक सर्वभाव से परमात्मा को ही अपना नहीं मानेगा, तब तक भगवद् स्मरण, चिंतन, ध्यान में पूरा मन लगेगा नहीं; पूजा, पाठ, जप कुछ भी करता रहे। जब तक साधक बीते हुए का मनन व भविष्य की चिंता छोड़कर वर्तमान में जो कुछ हो रहा है उसे साक्षी होकर नहीं देखेगा, तब तक 'स्व' का ज्ञान नहीं

होगा, 'स्व' की 'मैं' को जाने बिना आत्मा-परमात्मा की अनुभूति नहीं होगी, दोष नहीं मिटेंगे।

भोगी के लिए सांसारिक वस्तुओं को प्राप्त करना पुरुषार्थ माना जाता है परंतु जो परमात्म-ज्ञान, परमात्म-प्रीति, परमात्म-योग चाहता है उसके लिए लोभ, मोह, अभिमान एवं अकर्तव्य का त्याग ही पुरुषार्थ कहा गया है। धन्य हैं ऐसे सच्चे पुरुषार्थी !

अभी तो अल्प मति के लोग संसार का झमेला बढ़ाना ही पुरुषार्थ मानते हैं। वे नश्वर चीजों को बढ़ाकर ही पुरुषार्थ किया ऐसा मानते हैं और खप जाते हैं बेचारे ! वे परमात्म-सुख से वंचित रह जाते हैं।

महर्षि वसिष्ठजी ने तो कहा है कि 'जो दुरात्मा सम्भोग-सुख, भोजन के सुख में तथा राज्यादि वैभव-सुखों में ही संतुष्ट रहते हैं, उन्हें तो अन्धे मेंढक के समान ही समझना चाहिए।'

मानव आकृति में ऐसे भी बुद्धिमान, विद्वान और अनेकों अशिक्षित अभिमानी मिलते हैं जो अकारण ही साधन-भजन की, दान-पुण्य की, साधु-ब्राह्मणों की निंदा किया करते हैं। संत कबीरजी ने ठीक ही कहा है :

ऐसे लोगन को का कहिये।
तिनसों सदा डेराने रहिये ॥
हर जस सुनहिं न हरि गुन गावहिं।
बातन ही असमान गिरावहिं ॥
आपु न देहिं चरु भरि पानी।
तेहि निन्दहिं जहिं गंगा आनी ॥
बैठत उठत कुटिलता चालहिं।
आपु गये औरन को घालहिं ॥
छांड़ि कुचर्चा आन न जानें।
ब्रह्मा हू को कह्यौं न मानें ॥
आपु गये औरन को खोवहिं।
आग लगाइ मन्दिर मह सोवहिं ॥
और न हँसत आप हहकाने।
तिनकों देखि कबीर डेराने ॥

अतः ईश्वर की दृढ़ प्रीति जिनके जीवन में नहीं है वे आप भी उत्पात में फँसे हैं तथा औरों को भी ईश्वर से विमुख करके जन्म-मरण और नरकाग्नि की तरफ ले जाते हैं। कबीरजी मानों ऐसे लोगों से बचने का संकेत करते हैं।

***

न दूरी है न दुर्लभ !

– पूज्य बापूजी

ईश्वरो न महां बुद्धे दूरे न च दुर्लभः ।
महाबोध मयैकात्मा स्वात्मैव परमेश्वरः ॥

'ईश्वर न तो दूरी पर है और न अत्यंत दुर्लभ है, महाबोधरूप एकरस अपना आत्मा ही परमेश्वर है।' **(श्री योगवासिष्ठ महारामायण)**

जो बचपन का साक्षी, यौवन का साक्षी, सुख-दुःख का भी साक्षी है, साक्षी वृत्ति का भी जो अधिष्ठान-आधार है वह महाबोधस्वरूप आत्मदेव न दुर्लभ है न दूर है।

आदि सचु जुगादि सचु ॥
है भी सचु नानक होसी भी सचु ॥

अनेक शरीर मिले और मरे, फिर भी तुम्हारा परमेश्वर तुमसे न कभी बिछुड़ा न बिछुड़ेगा। उसको जानने में, पाने में, पूर्ण आनंद, पूर्ण ज्ञान, पूर्ण जीवन का अनुभव करने में जो लापरवाह होते हैं, वे संसार की कल्पनाओं में, शोकों में, विकारों में झुलस-झुलस के मरते रहते हैं। धनभागी वे हैं जो अपने सच्चिदानंद स्वभाव परमेश्वर का ज्ञान पाते हैं, परमेश्वर का ध्यान करते हैं और परमेश्वर आत्मदेव में विश्रांति पाते हैं। वे ही धन्य हैं, जगमन्य हैं।

पूरा प्रभु आराधिआ पूरा जा का नाम ॥
नानक पूरा पाइआ पूरे के गुन गाउ ॥

संसार की परिस्थिति अपूर्ण है, हमारा आत्मदेव पूर्ण है, उसको पा लो। □

सर्वोपरि व परम हितकर...

(गतांक से आगे)

देवर्षि नारदजी शुकदेवजी से कहते हैं : इस मानव-शरीररूपी घर में हड्डियों के खंभे, नसों के बंधन और रुधिर-मांसरूपी पलस्तर है । चाम से मढ़े हुए इस घर में मल-मूत्र की महादुर्गन्ध ठसाठस भरी है । बुढ़ापा और शोक से युक्त रोगों के इस घर के प्रत्येक छेद से मल-मूत्र की दुर्गन्ध सदा निकला करती है और यह घर भूतों का बसेरा है । अतएव ऐसे अनित्य एवं घृणित शरीर की आसक्ति को त्यागने की तुम इच्छा करो । जो मनुष्य अपने पूर्वकर्मानुसार सदा दुःखी रहता है और दुःख-निवृत्ति के लिए अनेक प्राणियों को मारा करता है अथवा सताया करता है, वह मानो इन कर्मों से और नये पापों को संचित करता है और इससे उसका दुःख उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है । क्योंकि कुपथ्य के परिणामस्वरूप रोग से ग्रसित प्राणी कुपथ्य के द्वारा रोग से छुटकारा नहीं पा सकता । प्रत्युत उसका रोग और बढ़ जाता है । बुद्धि के मोहांधकार से आच्छादित हो जाने से मनुष्य दुष्कृत्यों में सुख का अनुभव किया करता है । अपने उन्हीं कर्मों से वह सदा इस प्रकार मथा जाता है जैसे मथानी दही को मथती है । अतः इस संसार में दुःख-ही-दुःख है । यह विचारकर मुमुक्षुजन को सदैव उदासीन भाव से रहना चाहिए ।

जो मनुष्य उदासीन भाव से नहीं रहता, वह कर्म-बंधनों से जकड़ा हुआ, अनेक दुःखों को भोगता हुआ नये-नये कर्मफलों के उदय होने से रथचक्र के समान संसार में भ्रमण किया करता है । इससे वह घबराता तो है किंतु जाल में फँसी मछली अथवा पक्षी की तरह वह छूट नहीं सकता । अतएव हे शुकदेव ! तुम उन बंधनों को काटकर और कर्मों से निवृत्त होकर, संकल्प एवं मनोरथों को त्यागकर, समस्त इन्द्रियजित् और सत्-असत् के ज्ञाता, ज्ञानी हो जाओ । अब तक अनेक ऋषि-महर्षि धारणा, ध्यान, समाधि आदि के संयम से नवीन बंधनों से छूटकर सुखप्रद और सर्वबाधारहित सिद्धि अपने तपोबल से पा चुके हैं । अतएव तुम भी इसी प्रकार तपोबल से सिद्धि प्राप्त करो ।

सांख्य, योग, वेदांतादि कल्याणकारी शास्त्रों के पढ़ने और मनन करने से शोक नष्ट हो जाता है । अतः इन शास्त्रों को सुनने से अथवा अध्ययन करने से मनुष्य की बुद्धि उत्तम हो जाती है और उत्तम बुद्धि होने से वह सुखपूर्वक उन्नत मार्ग पर अग्रसर होता है । संसार में मूर्खजनों को नित्य ही अनेक दुःखों और भयों का सामना करना पड़ता है । विद्वान पंडितों के सामने वे दुःख और भय कभी नहीं आते । इसे हम ऐसे भी कह सकते हैं कि जिनको दुःख, भय आदि नहीं दबाते वे ही पंडित हैं, अन्य लोग मूर्ख हैं ।

हे शुकदेव ! यदि तुम्हारा मन अपने वश में है तो मेरा उपदेश तुम ध्यान से सुनो । क्योंकि ऐसे ज्ञानोपदेश से ही दुःख दूर होते हैं और कल्याण का मार्ग दिख पड़ता है । निर्बुद्धि और अल्पमति मनुष्यों की पहचान यही है कि वे अपने ऊपर किसी अनिष्ट के आने या विपत्ति के पड़ने पर अथवा अपने स्त्री-पुत्रादि किसी प्रिय स्वजन का वियोग होने पर अपार दुःख-सागर में डूब जाते हैं । जो पदार्थ नष्ट हो चुके उनके गुणों या भलाइयों का स्मरण न करना चाहिए क्योंकि उनका स्मरण करने से वे उनके स्नेह या प्रेम के बंधन से छुटकारा नहीं पा सकते । अतएव सुख-भोग से उदासीन रहना ही कल्याणकारी, आत्मशांतिदायी है । **(क्रमशः)** ☐

सर्वोपरि व परम हितकर...

(गतांक से आगे)

देवर्षि नारदजी शुकदेवजी से कहते हैं : इस मानव-शरीररूपी घर में हड्डियों के खंभे, नसों के बंधन और रुधिर-मांसरूपी पलस्तर है। चाम से मढ़े हुए इस घर में मल-मूत्र की महादुर्गन्ध ठसाठस भरी है। बुढ़ापा और शोक से युक्त रोगों के इस घर के प्रत्येक छेद से मल-मूत्र की दुर्गन्ध सदा निकला करती है और यह घर भूतों का बसेरा है। अतएव ऐसे अनित्य एवं घृणित शरीर की आसक्ति को त्यागने की तुम इच्छा करो। जो मनुष्य अपने पूर्वकर्मानुसार सदा दुःखी रहता है और दुःख-निवृत्ति के लिए अनेक प्राणियों को मारा करता है अथवा सताया करता है, वह मानो इन कर्मों से और नये पापों को संचित करता है और इससे उसका दुःख उत्तरोत्तर बढ़ता जाता है। क्योंकि कुपथ्य के परिणामस्वरूप रोग से ग्रसित प्राणी कुपथ्य के द्वारा रोग से छुटकारा नहीं पा सकता। प्रत्युत उसका रोग और बढ़ जाता है। बुद्धि के मोहांधकार से आच्छादित हो जाने से मनुष्य दुष्कृत्यों में सुख का अनुभव किया करता है। अपने उन्हीं कर्मों से वह सदा इस प्रकार मथा जाता है जैसे मथानी दही को मथती है। अतः इस संसार में दुःख-ही-दुःख है। यह विचारकर मुमुक्षुजन को सदैव उदासीन भाव से रहना चाहिए।

जो मनुष्य उदासीन भाव से नहीं रहता, वह कर्म-बंधनों से जकड़ा हुआ, अनेक दुःखों को भोगता हुआ नये-नये कर्मफलों के उदय होने से रथचक्र के समान संसार में भ्रमण किया करता है। इससे वह घबराता तो है किंतु जाल में फँसी मछली अथवा पक्षी की तरह वह छूट नहीं सकता। अतएव हे शुकदेव ! तुम उन बंधनों को काटकर और कर्मों से निवृत्त होकर, संकल्प एवं मनोरथों को त्यागकर, समस्त इन्द्रियजित् और सत्-असत् के ज्ञाता, ज्ञानी हो जाओ। अब तक अनेक ऋषि-महर्षि धारणा, ध्यान, समाधि आदि के संयम से नवीन बंधनों से छूटकर सुखप्रद और सर्वबाधारहित सिद्धि अपने तपोबल से पा चुके हैं। अतएव तुम भी इसी प्रकार तपोबल से सिद्धि प्राप्त करो।

सांख्य, योग, वेदांतादि कल्याणकारी शास्त्रों के पढ़ने और मनन करने से शोक नष्ट हो जाता है। अतः इन शास्त्रों को सुनने से अथवा अध्ययन करने से मनुष्य की बुद्धि उत्तम हो जाती है और उत्तम बुद्धि होने से वह सुखपूर्वक उन्नत मार्ग पर अग्रसर होता है। संसार में मूर्खजनों को नित्य ही अनेक दुःखों और भयों का सामना करना पड़ता है। विद्वान पंडितों के सामने वे दुःख और भय कभी नहीं आते। इसे हम ऐसे भी कह सकते हैं कि जिनको दुःख, भय आदि नहीं दबाते वे ही पंडित हैं, अन्य लोग मूर्ख हैं।

हे शुकदेव ! यदि तुम्हारा मन अपने वश में है तो मेरा उपदेश तुम ध्यान से सुनो। क्योंकि ऐसे ज्ञानोपदेश से ही दुःख दूर होते हैं और कल्याण का मार्ग दिख पड़ता है। निर्बुद्धि और अल्पमति मनुष्यों की पहचान यही है कि वे अपने ऊपर किसी अनिष्ट के आने या विपत्ति के पड़ने पर अथवा अपने स्त्री-पुत्रादि किसी प्रिय स्वजन का वियोग होने पर अपार दुःख-सागर में डूब जाते हैं। जो पदार्थ नष्ट हो चुके उनके गुणों या भलाइयों का स्मरण न करना चाहिए क्योंकि उनका स्मरण करने से वे उनके स्नेह या प्रेम के बंधन से छुटकारा नहीं पा सकते। अतएव सुख-भोग से उदासीन रहना ही कल्याणकारी, आत्मशांतिदायी है। **(क्रमशः)** □

'मैं भगवान को ही दे डालता हूँ...'

- पूज्य बापूजी

सद्गुरु की सेवा करने से पुण्य-अर्जन होता है और गुरुजी से ज्ञान-प्रश्न पूछने का भाव भी बन जाता है । गुरु कृपा करके उन प्रश्नों का यथार्थ उत्तर देकर संतुष्ट भी करते हैं । अपने सेवक को महान बनाने के लिए दिन-रात सद्गुरु चेष्टा करते ही हैं । भगवान श्रीकृष्ण ने भी पहले अर्जुन उनसे प्रश्न पूछे ऐसी तैयारी की और अर्जुन से पुछवाया, फिर उत्तर देकर अर्जुन को ज्ञातज्ञेय कर दिया । श्रीकृष्ण ने ही पहले अधिदैव, अधिभूत, अध्यात्म विषयों को छेड़ा और फिर अर्जुन से प्रश्न पुछवाया कि अधिदैव, अधिभूत, अध्यात्म, कर्म, ब्रह्म क्या हैं ? और भगवान श्रीकृष्ण ने उत्तर दिया ।

यह गुरुओं की कैसी कृपा है ! भूख भी जगाते हैं, फिर खाना भी देते हैं और पचाने में सहयोग भी करते हैं । संसारी माता-पिता तो भूख जगे तब देते हैं और वह भूख फिर से लगती रहती है । गुरुदेव तो भगवत्प्राप्ति की भूख जगा देते हैं; दुनिया का और कोई दाता नहीं है जो भगवान का दान दे डाले । सद्गुरुदेव तो भगवान को ही दान में दे देते हैं । भगवान भक्तों के प्रति दान हो जाते हैं तो भगवान भी प्रसन्न हो जाते हैं और भक्त भी प्रसन्न हो जाते हैं । ऐसे गुरुओं से भगवान भी आत्मीयता रखते हैं, उनकी सेवा वे स्वयं करते हैं । मैं भी आपमें भगवान की भूख जगाता हूँ और जब तक भगवान नहीं मिलते तब तक भगवान की भूख और निकटता तो है ही है ! इससे आप भी मेरे से प्रसन्न हो रहे हैं और भगवान भी मेरी हाँ-में-हाँ मिला रहे हैं। जैसे बच्चों को माँ दे डाली तो बच्चे भी प्रसन्न हो जाते हैं और माँ भी प्रसन्न हो जाती है। इसी प्रकार मैं भगवान को ही दे डालता हूँ तो भगवान भी मेरे पर राजी हैं । मेरे गुरुजी ने भगवान दे डाले तो गुरुजी पर भगवान नाराज हो गये क्या ? भगवान उनके यहाँ से चले गये क्या ? मान लो कि घर में १० बच्चे हैं । दसों बच्चों को समझाया गया कि माँ के लिए तड़पो और बाद में माँ और एक बच्चे का मेल करवा दिया तो क्या माँ एक ही बच्चे की हुई ? ९ बच्चों का हिस्सा चला गया क्या ? नहीं । माँ तो ९ के ९ बच्चों की भी उतनी-की-उतनी ही है, पूरी-की-पूरी ! यहाँ तो हम सभी उस ब्रह्म की संतान हैं ।

जिस प्रकार कोई चीज-वस्तु उठाकर दे देते हैं, ऐसा नहीं होता है भगवान को देने में । **जैसे तरंग को अपने पानीस्वरूप का ज्ञान दे दिया तो आपने तरंग को समुद्र ही दे डाला । ऐसे जीव को अपने 'सोऽहं' स्वरूप का ज्ञान दे दिया तो सद्गुरु ने जीव को ब्रह्म ही दे डाला, बस ।** ❒

सद्गुरु सारे गुरुओं से विलक्षण होते हैं । वे सत्स्वरूप परमात्मा के पथ को जानते हैं, इसीसे मनुष्य उन सद्गुरु को परम गुरु मानकर सब कुछ उनके चरणों पर न्योछावर कर देता है क्योंकि वह उनसे ऐसी चीज पाता है, जिसके सामने संसार की सभी चीजें, सभी स्थितियाँ बहुत ही कम कीमत की और अत्यंत तुच्छ हैं ।

(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'जीवन रसायन' से)

सद्गुरु की पूजा किये...

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

मंदिरों के देवी-देवताओं के पूजन के बाद ऐसा कौन-सा पूजन रह जाता है, जिस पूजन से सारे पूजन संपन्न होते हैं ?

वह आत्मज्ञानी गुरु का पूजन है।

हरि हर आदिक जगत में पूज्य देव जो कोय।
सद्गुरु की पूजा किये सबकी पूजा होय॥

(वेदांत का सुप्रसिद्ध ग्रंथ 'विचार सागर')

तमाम देवी-देवताओं का, अनेक यक्ष-गन्धर्वों का पूजन कर लो, फिर भी किसीका पूजन बाकी रह जाता है लेकिन उस आत्मदेव में जगे हुए महापुरुष, आत्मारामी गुरु का पूजन हो गया तो सभी भगवानों का, सभी देवी-देवताओं का पूजन हो जाता है।

सद्गुरुओं के, सच्चे संतों के प्रति आदर और श्रद्धा करने से संतों का, सद्गुरुओं का सम्मान नहीं, हमारे जीवन का सम्मान होता है।

आप शालग्राम की पूजा करते हैं तो यह नहीं सोचते हैं कि मैं यह गंडकी नदी के पत्थर की पूजा करता हूँ, नहीं, आप सोचते हैं कि आदिनारायण भगवान विष्णु की पूजा करता हूँ। मंदिर में शिवलिंग की पूजा करते हैं तो आप डेढ सौ रुपये के पत्थर की पूजा नहीं करते, भगवान शिव की पूजा करते हैं। ऐसे ही आत्मज्ञानी गुरु की पूजा करने से किसी व्यक्ति का आदर नहीं होता है, सच्चिदानंद का आदर होता है, जीवात्मा की अपनी ऊँचाई के अनुसार प्रकट ब्रह्म का आदर होता है। हमने जो गुरुदेव का आदर-पूजन किया उससे जो हमें लाभ हुआ वह हजारों जन्मों के माता-पिता मिलकर भी नहीं दे सके, मेरे को उतना ऊँचा नहीं उठा सके। हजारों जन्मों की माताओं, हजारों जन्मों के पिताओं की कृपा ले-लेकर भी हम जन्मते-मरते रहे और अपनेको नहीं जाना था लेकिन गुरुकृपा मिली, गुरु की पूजा फली तो -

देखा अपने आपको मेरा दिल दीवाना हो गया।
न छेड़ो मुझे यारों मैं खुद पे मस्ताना हो गया॥

वह परम पुरुष दिव्य है। उसका चिंतन करके जो उसमें विश्रांति पाता है और उसमें अपने 'मैं' को मिलाता है, ऐसा महापुरुष अगर किसी मुर्दे के धुएँ को देख लेता है तो उस मुर्दे की दुर्गति माफ हो जाती है, सद्गति होने लगती है। नरक उसको माफ हो जाते हैं, कुछ ऊँची अवस्था में जाता है।

जो चक्षुओं का चक्षु है, वाणी का उद्गम-स्थान है, मन को मनन की सत्ता देता है, बुद्धि को निर्णय की सत्ता देता है, बुद्धि के बदलने पर भी जो नहीं बदलता है, उस देव को जो 'सोऽहम् स्वरूप' में जानता है, ऐसे पुरुष का संग, सान्निध्य पानेवाले की सारी पूजाएँ सफल हो जाती हैं, उसके सारे कर्म सत्कर्म हो जाते हैं क्योंकि सत्स्वरूप वही देव है। बाकी के लोगों के पुण्यकर्म नश्वर फल, सुख देकर मिट जाते हैं और पापकर्म नश्वर दुःख देकर मिट जाते हैं। लेकिन शाश्वत आत्मा में जगे हुए महापुरुष का आदर-पूजन करनेवाले को सत्संग-सान्निध्य और परम लाभ हो जाता है।

यं यं लोकं मनसा संविभाति

(शेष पृष्ठ ३० पर)

सबके हित में अपना हित

सबके हित की बात सोचने से सबका हित होता है, पर स्थूल बुद्धिवाले इस बात को नहीं समझते। स्थूल वस्तु तो एकदेशीय होती है परंतु सूक्ष्म वस्तु व्यापक होती है, वह सब जगह फैलती है। विचार सूक्ष्म होते हैं, अतः सबके हित का भाव मन में आने से वैसा ही वायुमंडल बनता है, जिससे सबको सुख पहुँचता है। इसीलिए भगवान कहते हैं :

ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहिते रताः ।

'जिनके अंदर सबके हित की भावना है वे परमात्मतत्त्व को प्राप्त होते हैं।' (गीता : १२.४)

जिसके अंतःकरण में राग-द्वेष न होकर सबके हित की भावना होती है उसकी समष्टि के साथ एकता हो जाती है।

'गीता' में भगवान ने कहा है :

सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति ।

'मुझ (भगवान) को प्राणिमात्र का सुहृद जाननेवाले को शांति मिलती है।' (गीता : ५.२९)

ऐसी स्थिति में जिसमें सबके हित की भावना होती है, जो सबके भले का ही भाव रखता है अर्थात् जो **सर्वेभवन्तु सुखिनः** - सब-के-सब सुखी हो जायें, **सर्वेसन्तु निरामयाः** - सब-के-सब नीरोग रहें, **सर्वेभद्राणि पश्यन्तु** - सभी सबका मंगल देखें (सबका मंगल-ही-मंगल हो), **मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत्** - किसीको किंचिन्मात्र भी दुःख न हो - ऐसा भाव अपने मन में रखता है, उसकी उस भावना की प्राणिमात्र के सुहृद भगवान की भावना के साथ एकता हो जाती है। परमात्मा की भावना के साथ एकता होने से उसकी सहज ही परमात्मा से अभिन्नता हो जाती है। परंतु यदि वह अभिमान कर लेता है तो यह शक्ति नहीं मिलती।

शास्त्रों का आदेश है - देवताओं का पूजन देवता बनकर करे - **देवो भूत्वा यजेद् देवम् ।** ऐसे ही मंत्र को सिद्ध करना हो तो मंत्र का अपने में न्यास करके स्वयं मंत्ररूप बनना पड़ता है। इसी प्रकार सबके हित का भाव जिनके मन में रहता है वे परमात्मतत्त्व को प्राप्त कर लेते हैं। अतः सबका हित करने में हर समय तत्पर रहना ही परमात्मा को प्राप्त करने का सबसे उत्तम व सरल उपाय है। □

(पृष्ठ ५ 'परिप्रश्नेन' का शेष) इतना क्या महत्त्व देना धन को ! धन आपके लिए है, आप धन के लिए नहीं। धर्म आपके लिए है, कामना आपके लिए है, मोक्ष आपके लिए है... ये सब आपकी उन्नति के लिए हैं। लेकिन इन अर्थ और कामना को अत्यधिक महत्त्व देते हैं तो इन्हींसे अनर्थ हो जाता है। न देखा त्यौहार न देखा संयम, न देखा अपनी पत्नी न देखा पड़ोस की बहन और कामनापूर्ति में लग गये तो यह तबाही कर देगी।

तो धर्मसंयुक्त अर्थ कमायें और धर्म की मर्यादा में रहकर अर्थ का सदुपयोग करें जिससे विवेक जगे, वैराग्य जगे और मोक्ष के द्वार खुलें।

भगवद्ज्ञान और भगवद्ध्यान से जितना मंगल होता है उतना अति संपदा से नहीं होता, अति प्रसिद्धि से नहीं होता, प्रचुर स्वर्ग के वैभव से नहीं होता, उनसे तो आपका पुण्य और समय खर्च होता है। भगवद्ध्यान और भगवद्ज्ञान से आपका पुण्य बढ़ता है और समय भगवन्मय हो जाता है। अधिक-से-अधिक फायदेवाला काम है भगवद्ध्यान और भगवद् तत्त्व का ज्ञान। □

अर्धमत्स्येन्द्रासन

मत्स्येन्द्रासन की रचना योगी गोरखनाथजी के गुरु श्री मत्स्येन्द्रनाथजी ने की थी। वे इस आसन में ध्यान किया करते थे। मत्स्येन्द्रासन की आधी क्रियाओं को लेकर अर्धमत्स्येन्द्रासन प्रचलित हुआ है।

इसके अभ्यास से -

(१) यकृत तथा मूत्राशय सुचारु रूप से कार्य करने लगते हैं।

(२) अग्न्याशय सक्रिय हो जाता है, इन्सुलिन का उत्पादन होने में मदद मिलती है, जिससे मधुमेह के रोगियों को अधिक लाभ होता है।

(३) पाचन-संस्थान संबंधी रोगों का निवारण होता है तथा भूख खुलकर लगती है।

(४) मेरुदण्ड के आस-पास फैली हुई नस-नाड़ियों में रक्तसंचार ठीक-से होता है।

(५) वातरोग, कमरदर्द तथा मांसपेशियों की जकड़न दूर होती है।

(६) सम्पूर्ण शरीर में फैली हुई मस्तिष्क से संबंधित नाड़ियाँ शक्तिशाली और स्वस्थ बनती हैं।

(७) अधिवृक्क-ग्रंथि, उपवृक्क-ग्रंथि एवं पित्त के स्राव का नियमन होता है।

विशेष निर्देश : यह आसन श्वासनली (साइनोसाइटिस) के रोग, फेफड़ों के रोग (ब्रोंकायटिस), कब्ज, कोलाइटिस, मासिक धर्म संबंधी अनियमितता, मूत्र-निष्कासन प्रणाली से संबंधित रोग तथा सरवाइकल स्पोन्डिलोसिस आदि में लाभदायी है।

विधि : जमीन पर बैठकर बायें पाँव की एड़ी को दाहिनी तरफ से लाकर नितम्बों के पास इस प्रकार स्थापित करें कि एड़ी का हिस्सा गुदा के पास लग जाय। तत्पश्चात् दाहिने पाँव को घुटने से मोड़कर बायें पाँव के ऊपर से ले जाते हुए घुटने के पास जमीन पर जमाकर रख दें। फिर बायें हाथ को दायें घुटने से पार करके अर्थात् घुटने को बगल में दबाते हुए दाहिने पैर के पंजे को पकड़ें। तत्पश्चात् दायें हाथ से कमर को लपेटकर बायीं जाँघ को पकड़ने का प्रयत्न करें। मेरुदंड को सीधा रखें, झुकें नहीं। सिर को दाहिनी तरफ घुमाते हुए ठोड़ी को कंधे की सीध में लायें।

फिर पैरों व हाथों को बदलकर यही क्रिया विपरीत दिशा में करें।

यह आसन १० से १५ मिनिट करें और इस आसन में पाँच-सात बाह्य-आभ्यांतर कुंभक विशेष फायदा करेंगे।

सावधानी : महिलाएँ दो-तीन महीने के गर्भ के बाद इस आसन का अभ्यास न करें। पेप्टिक अल्सर, हर्निया या हाइपर थायराइड से ग्रस्त व्यक्ति इसका अभ्यास योग्य शिक्षक के मार्गदर्शन में ही करें। जिन्हें हृदयरोग है उन्हें इसका अभ्यास नहीं करना चाहिए क्योंकि इससे हृदय से निकलनेवाली धमनियों और कोशिकाओं पर अधिक जोर पड़ता है। ❐

ओज

उर्जयति बलं वर्धयति प्राणान् वा धारयतीत्योजः ।

'शरीर की ऊर्जा व बल बढ़ानेवाले, प्राणों को धारण करनेवाले पदार्थ को ओज कहते हैं ।'

ओज यह रस आदि सप्तधातुओं का उत्कृष्ट सार भाग है । जिस प्रकार मधुमक्खियों द्वारा फूलों से एकत्रित किये रस से शहद का निर्माण होता है, उसी प्रकार रस-रक्तादि धातुओं के निर्माण के समय उत्पन्न सारभूत भाग से ओज का निर्माण होता है । दूध में अदृश्य रूप में घी निहित रहता है, वैसे ही संपूर्ण शरीर में ओज व्याप्त रहता है । इसका मुख्य स्थान हृदय है । ओज के ही कारण मनुष्य सभी प्रकार के कार्य करने में समर्थ होता है। ओज कारण है व बल उसका कार्य है । जितना ओज अधिक उतना वर्ण और स्वर उत्तम रहता है तथा मन, बुद्धि व इन्द्रियाँ अपना कार्य करने में उत्तम रूप से प्रवृत्त होती हैं । ओजस्वी व्यक्ति धीर, वीर, बुद्धिमान, बलवान और हर क्षेत्र में यशस्वी होता है। व्याधि-प्रतिकार की क्षमता ओज पर निर्भर होती है ।

ओज के गुण : ओज सौम्य, स्निग्ध, शीत, मृदु, प्रसन्न आदि १० गुणों से युक्त है ।

मद्य के उष्ण, तीक्ष्ण, अम्लादि १० गुण ओज के १० गुणों से पूर्णतः विरुद्ध होने के कारण मद्यपान से ओज का शीघ्र नाश हो जाता है । गाय के घी के सभी गुण ओज के गुणों के समान हैं जिससे ओज की शीघ्र वृद्धि होती है ।

ओजक्षय के हेतु : अति मैथुन, अति व्यायाम, अत्यधिक उपवास, अल्प व रुक्ष भोजन, भय, शोक, चिंता, जागरण, तीव्र वायु और धूप का सेवन, कफ, रक्त, शुक्र अथवा मल का अधिक मात्रा में बाहर निकल जाना, वृद्धावस्था, मद्यपान व भूतोपघात (रोगजनक जीवाणुओं का संक्रमण) से ओजक्षय होता है ।

ओजक्षय के लक्षण : ओजक्षय के कारण मनुष्य भयभीत व चिंतित रहता है । उसकी इन्द्रियों की कार्यक्षमता घट जाती है तथा वर्ण, स्वर बदल जाते हैं । वह निस्तेज, बलहीन व कृश हो जाता है । ओज का अधिक क्षय होने पर प्रलाप, मूर्च्छा व मृत्यु तक हो जाती है ।

ओजवर्धक पदार्थ :

१. ओजवृद्धि का मुख्य कारण मन की प्रसन्नता व निर्द्वन्द्वता (समता) है । इसकी प्राप्ति तत्त्वज्ञान से होती है ।

२. मधुर, स्निग्ध, शीतवीर्य, हितकर व मनोनुकूल आहार तथा सुखशीलता ओजवर्धक है ।

३. आँवला, अश्वगंधा, यष्टिमधु, जीवन्ती (डोडी), गाय का दूध व घी, अंगूर, तुलसी के बीज, सुवर्ण आदि रसायन द्रव्य उत्कृष्ट ओजवर्धक हैं ।

४. ब्रह्मचर्य परम ओजवर्धक है ।

*

भोजन : एक यज्ञकर्म

(गतांक से आगे)

सेवन किये गये अन्न-पदार्थों के गुण-कर्मों का परिणाम शरीर पर प्रत्यक्ष दिखायी देता है । कुछ पदार्थ वात-पित्त-कफ इन तीनों दोषों में से किसी एक-दो अथवा तीनों को बढ़ाते हैं, कुछ इनका शमन करते हैं । अपनी-अपनी प्रकृति, ऋतु,

उम्र, देश आदि का विचार कर इनका सेवन करने से त्रिदोषों का संतुलन बना रहता है, जिससे शरीर स्वस्थ रहता है । अन्न-पदार्थों का त्रिदोषों पर होनेवाला परिणाम निम्न तालिका में दिया गया है । (↑ चिह्न दोषवर्धक का व ↓ चिह्न दोषशामक का बोधक है ।)

शूकधान्य (अनाज)	वात	पित्त	कफ
१. साठी के चावल	↓	↓	↓
२. जौ	↑	↓	↓
३. गेहूँ	↓	↓	↑
४. ज्वार	↑	↓	↓
५. बाजरा	↓	↑	↓
६. मक्का	↑	↓	↓

शमीधान्य (दलहनें)			
१. मूँग	अल्प ↑	↓	↓
२. उड़द	↓	↑	↑
३. राजमा	↑	↓	↓
४. कुलथी	↓	↑	↓
५. मोठ	↑	↓	↓
६. मसूर	↑	↓	↓
७. चना	↑	↓	↓
८. मटर	↑	↓	↓
९. अरहर	↑	↓	↓
१०. बड़ी सेम	↑	↑	↓
११. तिल	↓	↑	↑

शाकवर्ग (सब्जियाँ)			
१. सरसों	↑	↑	↑
२. चौलाई	↑	↓	↓
३. करेला	अल्प ↑	↓	↓
४. बथुआ	↓	↓	↓
५. पुनर्नवा	↓	↓	नेत्र
६. परवल	↓	↓	↓
७. पोई	↓	↓	↑
८. पालक	↑	↓	↓
९. मूली - कोमल	↓	↓	↓
- पकी	↑	↑	↑
१०. फूलगोभी	↓	↑	↓
११. पत्तागोभी	↑	↓	↓
१२. पेठा - कच्चा	↑	↑	↑
- पका	↓	↓	↓
१३. लौकी	↑	↓	↑
१४. तुरई (तोरी)	↑	↓	↑
१५. ककड़ी - कोमल	↑	↓	↑
- पकी	↑	↑	↑
१६. खीरा	↑	↓	↑
१७. सहजन की फली	↓	↑	↓
१८. टिंडा	↑	↓	↓
१९. बैंगन - कोमल (बिना बीज के)	↓	↓	↓
- मध्यम पका हुआ	↓	↑	↓
२०. जीवंती	↓	↓	↓
२१. भिंडी	↓	↓	↑
२२. ग्वारफली	↑	↓	↑
२३. सूरन (जमीकंद)	↓	↑	↓
२४. गाजर	↓	↑	↓
२५. आलू	↑	↑	↑
२६. अरवी	↑	↑	↑
२७. शलगम	↓	↓	↓

सब्जियों में जीवंती (डोडी), बथुआ, पुनर्नवा, परवल, कोमल मूली, कोमल बैंगन (बिना बीज के), पका पेठा, शलगम त्रिदोषशामक हैं ।

सरसों, पकी मूली, कच्चा पेठा, पकी हुई ककड़ी, आलू व अरवी त्रिदोषवर्धक हैं । **(क्रमशः)** ❒

न देरी है न दूरी

दिसम्बर २००३ में मैंने सपरिवार सूरत आश्रम में पूज्य बापूजी से मंत्रदीक्षा ली थी। व्यस्त जीवन के बावजूद भी मैं और मेरी पत्नी ने इन ४ सालों में कभी मंत्रजप करना नहीं छोड़ा।

शिकागो में मेरी एक दुकान है। शुक्रवार ७ मार्च २००८ की एक शाम को मैं साप्ताहिक छुट्टियों के लिए दुकान बंद कर घर चला आया। सोमवार की सुबह को मैं दुकान जाने के लिए तैयार हुआ तो कहीं पर भी चाबियाँ नहीं मिलीं। घबराते हुए मैं शीघ्र ही दुकान पर पहुँचा। वहाँ जाकर वही देखा जिसका मुझे अत्यधिक भय था। चाबियाँ ताले पर लटक रही थीं। मैं ताला लगाकर चाबियाँ साथ ले जाना भूल गया था। मैं घबराते हुए दुकान के अंदर गया लेकिन पाया कि सारी चीजें उसी तरह सुरक्षित हैं जैसा मैं उन्हें तीन दिन पहले छोड़ गया था। एक चीज को भी किसीने छुआ तक नहीं। मुझे बड़ा आश्चर्य हुआ, खासकर इसलिए कि वहाँ का माहौल सेंधमारी के लिए खास मशहूर है। सामान्यतः अगर मैं दुकान को कुछ समय के लिए भी खुला रखता तो चोर उसे निश्चित ही लूटकर खाली कर देते। अपनेको भाग्यशाली मानते हुए मैं अपने काम में लग गया।

उसी सुबह एक नियमित ग्राहक अंदर आया और उसने मुझे पूछा : ''तुमने किसी भारतीय रक्षक को रखा है ?'' जब मैंने ना कहा तो उसने बताया : ''शुक्रवार की रात को मैंने सफेद लिबास में एक लंबी दाढ़ीवाले उम्रदार व्यक्ति को देखा। वे तुम्हारी दुकान की रक्षा कर रहे थे। मैंने उस रात पी रखी थी, इसलिए सोचा शायद मुझे भ्रम हुआ होगा लेकिन मैं जब दूसरे दिन आया तब भी उन्हें वहीं पाया।''

कुछ देर बाद एक महिला भी जो एक नियमित ग्राहक थी, अंदर आकर वहीं 'लंबी दाढ़ी, सफेद लिबास में भारतीय रक्षक' की बात बताने लगी।

मैंने बापूजी का चित्र लाकर उसे दिखाया और पूछा : ''क्या वे यही हैं ?'' बापूजी के चित्र की तरफ उँगली करते हुए वह महिला चीख पड़ी : ''यही हैं वे, यही हैं।''

बापूजी उस वक्त भारत में थे लेकिन मेरी रक्षा करने के लिए दूसरा रूप धारण करके १२,००० मील दूर अमेरिका में प्रकट हुए !

इस घटना के बाद मैं बहुत शर्म महसूस कर रहा हूँ कि अत्यधिक व्यस्तता के कारण ४ सालों में मैं एक बार भी पूज्य गुरुदेव के आश्रम में या उनका सत्संग सुनने जा न सका। मैंने अपने कर्तव्य में प्रमाद किया लेकिन उन्होंने अपनी कृपा बरसाने में कोई कमी नहीं रखी। गुरुदेव के पास न देरी है न दूरी। मैंने उनके दिव्य हाथों को यहाँ मेरी सुरक्षा करते हुए अनुभव किया।

– विनोद दिवेकर,

शिकागो (अमेरिका)। ❑

(पृष्ठ २५ 'सद्गुरु की पूजा किये...' का शेष)

विशुद्धसत्त्वः कामयते यांश्च कामान्।
तं तं लोकं जयते तांश्च कामां-
स्तस्मादात्मज्ञं ह्यर्चयेद्भूतिकामः ॥

'वह विशुद्धचित्त आत्मवेत्ता मन से जिस-जिस लोक की भावना करता है और जिन-जिन भोगों को चाहता है वह उसी-उसी लोक और उन्हीं-उन्हीं भोगों को प्राप्त कर लेता है। इसलिए ऐश्वर्य की इच्छा करनेवाला पुरुष आत्मज्ञानी की पूजा करे।' **(मुण्डकोपनिषद् : ३.१.१०)** ❑

('ऋषि प्रसाद' प्रतिनिधि)

हरिद्वार (उत्तराखंड), १८ से २० मई : भगवान या महापुरुषों की चरणरज से पावन उनकी तपःस्थली या लीलास्थली तीर्थ बन जाती है। ऐसी पुण्यस्थली में किन्हीं तीर्थंकर का शुभ आगमन होता है तो कितना मधुर 'दुग्ध-शर्करा योग' हो जाता है इसका अनुभव पंतद्वीप, हरिद्वार में लाखों-लाखों भक्तों ने पूज्य बापूजी के सान्निध्य में किया। अवसर था वैशाखी पूर्णिमा सत्संग-दर्शन कार्यक्रम का। यहाँ बापूजी के सान्निध्य में पूर्णिमा व्रतधारी भक्तों के साथ बड़ी संख्या में तीर्थयात्रियों और साधु-संतों ने भी ज्ञान-ध्यान की गहराइयों में गोता लगाया और हरिद्वार की पुण्यभूमि में अंतरात्मा हरि के द्वार की झलकियाँ पायीं।

जूना अखाड़ा, नया अखाड़ा, शैव, वैष्णव, संन्यासी, मंडलेश्वर, हजारों भजनानंदी साधु-संतों ने इन अनुभव-संपन्न सत्पुरुष का सत्संग-प्रसाद पाकर धन्यता का अनुभव किया।

पूज्य बापूजी के सान्निध्य में सभीने अनुभव किया कि भक्ति, ज्ञान, योग एवं निष्काम कर्म - ये ईश्वरप्राप्ति के मार्ग स्वतंत्र भी हैं एवं एक-दूसरे के पूरक भी हैं। इन सबका सुंदर समन्वय पूज्य बापूजी के जीवन एवं अमृतवाणी में प्रकट हुआ है।

सत्संग-स्थल पर सत्संग का लाभ लेने के पश्चात् बड़ी संख्या में भक्तजन पूज्यश्री के आश्रम जाने के मार्ग में एवं आश्रम के पंडाल में भी पहुँच जाते एवं बापूजी के दर्शन की बाट जोहते। बार-बार पूज्य बापूजी के दर्शन करके भी उनके नेत्र अघाते नहीं थे। 'स्टार न्यूज' चैनल ने 'समर्पण' कार्यक्रम द्वारा आस्था के इस सैलाब को देशवासियों तक पहुँचाया।

भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को ऐसे महापुरुषों में और उनके वाक्यों में श्रद्धा करने को बार-बार कहते हैं लेकिन यहाँ तो लाखों-लाखों गुरुभक्तों के हृदय में वह श्रद्धा का सागर था जिसको श्रद्धा चैनलवाले सजीव प्रसारण करने पर भी पूरी तरह अपनी चैनल के कैद में नहीं कर पाये।

राजा परीक्षित शुकदेवजी का सत्संग-प्रसाद पाते-पाते इतने आनंद-विभोर हो गये थे कि उनको भूख-प्यास भी विचलित नहीं कर पायी। यही अवस्था बापूजी के सत्संगियों की हो गयी थी। तेज वर्षा भी उन्हें विचलित नहीं कर पायी। देवताओं के अमृत से भी श्रेष्ठ एवं कल्याणकारी इस सत्संग-अमृत वर्षा के आगे बाह्य प्रतिकूलताएँ क्या मायना रखती हैं ? कुंभ पर्वस्थली हरिद्वार में बिना कुंभ के ही महाकुंभ जैसा माहौल हो गया।

अपने रब को सद्गुरु रूप में पाने की जो खुशी थी वह तो लाखों-लाखों भक्तों के चेहरों पर साफ दिखायी पड़ती थी। जिसका वर्णन वाणी में आते ही **(रब मेरा सतगुरु बण के आया...)** कोई खुशी से नाचने लगता तो कोई रोने लगता तो कोई इस अमृत को पीकर चुप हो जाता। धन्य हैं ऐसे अमृतरस को छकनेवाले वे श्रद्धालु-वृन्द !

कैसी है यह दीवानगी, दीवाने ही जानें।
अश्रद्धालु निंदक क्या जानें ?

सोलन (हिमाचल प्रदेश), ४ व ५ जून : मेघ देवता तो हिमाचलवासियों पर मेहरबान रहते हैं लेकिन इस बार आत्मारामी संत पूज्य बापूजी की मेहरबानी पाकर धन्य हुए सोलनवासी ! यहाँ पूज्य बापूजी का सत्संग-कार्यक्रम पहली बार हुआ। देवभूमि हिमाचल व ऋषियों-महर्षियों व पांडवों की इस तपःस्थली पर ब्रह्मनिष्ठ महापुरुष

पूज्य बापूजी के सत्संग में सोलनवासियों का उमड़ना स्वाभाविक ही था।

हिमालय की पहाड़ियों पर बसे इस छोटे-से शहर के सामान्यवर्गीय श्रद्धालु भक्तों के हृदय में सच्चे गुरुओं के प्रति श्रद्धा का विशाल सागर लहरा रहा था। पूज्य बापूजी ने सोलनवासियों को शरीर को निरोगी रखने के लिए व रोगी शरीर को निरोगी बनाने के लिए मंत्र भी प्रदान किया।

बिलासपुर (हिमाचल प्रदेश), ७ व ८ जून : यहाँ के सत्संग में हिमाचल प्रदेश के विभिन्न क्षेत्रों के लोगों ने उपस्थिति दर्शायी। राज्य के मुख्यमंत्री श्री प्रेमकुमार धूमल व वनमंत्री श्री जे.पी. नड्डा भी पूज्यश्री के सत्संग-मार्गदर्शन का लाभ लेने यहाँ पहुँचे एवं श्रोताओं के बीच बैठकर उन्होंने सत्संग-अमृत का पान किया।

मुख्यमंत्री श्री धूमल ने कहा : ''गुरुजी के प्रति पूरा समर्पण होना चाहिए। उनसे सौदेवाली श्रद्धा नहीं, सच्ची श्रद्धा होनी चाहिए। सच्ची श्रद्धा निहाल कर देती है। हिमाचल प्रदेश की जनता की ओर से और अपनी ओर से बापूजी के चरणों में शत-शत प्रणाम करता हूँ और प्रार्थना करता हूँ कि हमारे हिमाचल प्रदेश की इस देवभूमि को सत्संग-अमृत से बार-बार सींचने पधारते रहें।''

वे कर गये निहाल...

कहा गया है : 'जहाँ प्रेम होता है वहाँ नेम नहीं होता।' इसका प्रत्यक्ष प्रमाण तब देखने को मिला जब पूज्य बापूजी ने एक ही दिन में २ राज्यों के ६ शहरों को सत्संग-दर्शन से निहाल किया।

१० जून के उस ऐतिहासिक दिन **नादौन, अम्ब (हि.प्र.)** तथा **तलवाड़ा, मुकेरियाँ, कंदरौडी, पठानकोट (पंजाब)** इन ६ स्थानों में पूज्य बापूजी द्वारा सत्संग-अमृत की वर्षा हुई। मेघ बरसता है तो बाहरी ठंडक व हरियाली होती है लेकिन पूज्य बापूजी की सत्संग-वर्षा होती है तो तन-मन-मति में ईश्वरीय विश्रांति की शीतलता-सौम्यता व हृदय में परमात्म-प्रसादरूपी हरियाली होती है। इसका अनुभव उन सभीने किया जो भी इस वर्षा में नहाये।

तन की तन्दुरुस्ती, मन की प्रसन्नता व बुद्धि में ज्ञान-प्रकाश समस्त मानव-जाति की मूलभूत माँगें हैं। पूज्य बापूजी करुणावश उपर्युक्त रीति से स्वयं निरंतर भ्रमण कर जन-जन को घर बैठे उनकी माँगों की पूर्ति का लाभ प्रदान कर रहे हैं। इस प्रकार जब रब करुणा कर सद्गुरु बन के आता है तो उसके दीदार करने श्रद्धालुओं का हुजूम उमड़ना स्वाभाविक ही है। सभी जगहों पर बड़ी संख्या में भक्तजन पूज्य बापूजी की एक झलक पाने के लिए लालायित देखे गये। कोई भजन गाकर, कोई हाव-भावों से, कोई फूलमालाओं से तो कोई नेत्रों से छलकते अश्रुरूपी मोतियों से ही पूज्य बापूजी का अभिनंदन करते नजर आये। सभी भक्तों का चित्त बापूमय हो गया था। सभी हुए खुशहाल-निहाल व सदा के लिए हृदय में बस गये ये यादगार पल! □

संत श्री आसारामजी गुरुकुलों के १०वीं कक्षा के परिणाम

क्र.	स्थान	परिणाम	प्रथम श्रेणी में	सर्वोच्च %
१.	आगरा (उ.प्र.)	100 %	94.54 %	91.8 %
२.	छिन्दवाड़ा (म.प्र.)	100 %	86.84 %	91 %
३.	सरकी लिमडी, जि. साबरकांठा (गुज.)	100 %	40.90 %	83.54 %
४.	भोपाल (म.प्र.)	91.66 %	45.45 %	79.8 %
५.	राजकोट (गुज.)	90 %	66.66 %	84.62 %
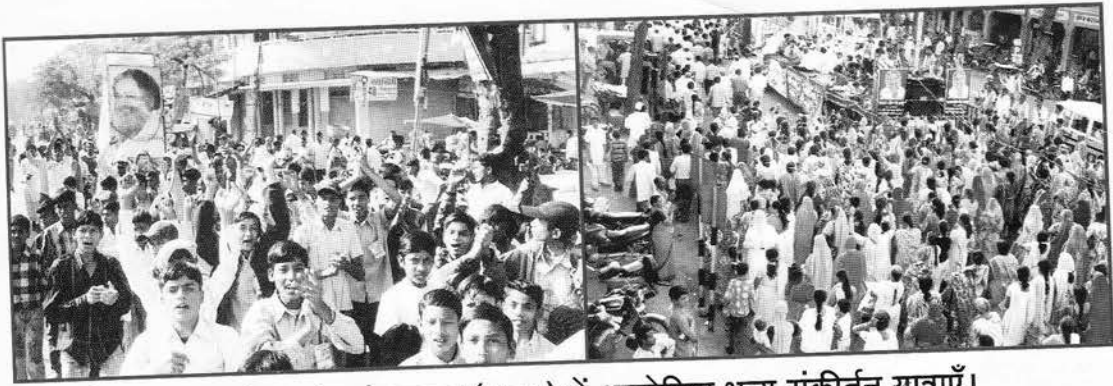
रायपुर (छ.ग.) एवं जयपुर (राज.) में आयोजित भव्य संकीर्तन यात्राएँ।

कोलकाता (प.बंगाल) एवं औरंगाबाद (महा.) में आयोजित संकीर्तन यात्राएँ।

जालंधर (पंजाब) में वस्त्र व प्रसाद वितरण तथा
भरतपुर (राज.) में अन्न-वितरण।

अलिबाग, जि. रायगढ़ (महा.) एवं भिलाई, जि. दुर्ग (छ.ग.) के कारागृहों में
भजन, कीर्तन, सत्संग आदि का आयोजन हुआ।

1 July 2008
RNP. NO. GAMC 1132/2006-08
WPP LIC NO. GUJ-207/2006-08
RNI NO. 48873/91
DL(C)-01/1130/2006-08
WPP LIC NO.U(C)-232/2006-08
G2/MH/MR-NW-57/2006-08
WPP LIC NO. MH/MR/14/07-08
'D' NO. MR/TECH/47-4/2008

चाय-कॉफी के घातक दुष्परिणाम

चाय-कॉफी में पाये जानेवाले केमिकल्स व उनसे होनेवाली हानियाँ :

१. केफिन : (१) ऊर्जा व कार्यक्षमता कम होती है । (२) कैल्शियम, पोटेशियम आदि खनिजों तथा विटामिन 'बी' का ह्रास होता है । (३) कोलेस्टरोल बढ़ता है परिणामतः हार्टअटैक हो सकता है । (४) कब्ज और बवासीर होती है। (५) रक्तचाप व अम्लता बढ़ती है। (६) नींद कम आती है। (७) सिरदर्द, चिड़चिड़ापन, मानसिक तनाव उत्पन्न होते हैं । (८) गुर्दे और यकृत खराब होते हैं । (९) शुक्राणुओं की संख्या घटने लगती है। जिससे प्रजननशक्ति कम होती है। (१०) अधिक चाय-कॉफी पीनेवाली महिलाओं की गर्भधारण की क्षमता कम होती है। (११) गर्भवती स्त्री अधिक चाय पीती है तो नवजात शिशु को जन्म के बाद नींद नहीं आती। वह उत्तेजित और अशांत रहता है। (१२) जोड़ों का दर्द, गठिया व त्वचाविकार उत्पन्न होते हैं। **२. टेनिन :** अजीर्ण व कब्ज करता है। इससे आलस्य व प्रमाद बढ़ता है। **३. थीन** से खुश्की चढ़ती है । **४. सायनोजन :** अनिद्रा व लकवा पैदा करता है । **५. एरोमिक ओईल :** आँतों पर हानिकारक प्रभाव डालता है । अधिक चाय पीनेवाले मधुमेह, चक्कर आना, गले के रोग, रक्त की अशुद्धि, दाँतों के रोग और मसूड़ों की कमजोरी से ग्रस्त हो जाते हैं।

बल, बुद्धि एवं पाचनवर्धक 'ओजस्वी चाय'

सभी ऋतुओं में सभीके लिए गुणकारी

१४ बहुमूल्य औषधियों के संयोग से बनी यह ओजस्वी चाय क्षुधावर्धक, मेध्य व हृदय के लिए बलदायक है। यह मनोबल को बढ़ाती है । मस्तिष्क को तनावमुक्त करती है, जिससे नींद अच्छी आती है। यह यकृत के कार्य को सुधारकर रक्त की शुद्धि करती है।

बल, बुद्धि एवं पाचन वर्धक
ओजस्वी
चाय

दो पैकेट का मूल्य : रु. ५० (डाकखर्च सहित रु. ९०)

सभी संत श्री आसारामजी आश्रमों एवं श्री योग वेदांत सेवा समितियों के सेवाकेन्द्रों पर उपलब्ध ।

वी.पी.पी. की सुविधा नहीं है । डी.डी., मनीऑर्डर भेजते समय अपनी माँग एवं अपना नाम, पूरा पता, पिनकोड व फोन नं. अवश्य लिखें।

पता : साहित्य विभाग, संत श्री आसारामजी आश्रम, साबरमती, अमदावाद - ३८०००५. फोन : ०७९-३९८७७७३०.

सोलापुर (महा.) में अन्न-वितरण तथा ब्यावर, जि. अजमेर (राज.) के विद्यार्थियों में गणवेश व जूतों का वितरण।

सिलीगुड़ी, जि. दार्जिलिंग (प.बंगाल) में भंडारा तथा काटोल, जि. नागपुर (महा.) में बाल भोज।

Posting at PSO Ahmedabad between 25 of preceding month to 10th of current month. * Posting at ND. PSO on 5th & 6th of E.M. * Posting at MBI Patrika Channel on 9th & 10th of E.M.